तृतीय अध्याय

3.1 चाय जनगोष्ठी: उद्गम एवं इतिहास

भारतीय अर्थव्यवस्था का मूलाधार कृषि है। प्राकृतिक संसाधनों से समृद्ध इस देश को 'सोने की चिड़िया' कहकर संबोधित किया गया है। भारत के पूर्वोत्तर में स्थित राज्य असम में खनिज तेल, प्राकृतिक गैस, जीवाश्म तथा कोयला आदि की भरमार है। इसके अतिरिक्त असम की मनमोहक हरियाली विशेष रूप से चाय के बागान इस राज्य के सौंदर्य को और आकर्षक बनाते हैं। इसीलिए असम को 'कच्चे सोने का देश' कहा जाता है। भारत में सालाना चाय उत्पादन का लगभग 55% पैदावार असम में होता है। इसके बाद पश्चिम बंगाल, केरल, तमिलनाडु, त्रिपुरा, अरुणाचल प्रदेश, सिक्किम आदि राज्यों को चाय उत्पादक राज्यों के अंतर्गत सूचीबद्ध किया जाता है। इस दृष्टि से देखा जाए तो असम की चाय वैश्विक स्तर पर अर्थव्यवस्था की नींव को सुदृढ़ किये हुए है। अत्यंत महँगे दरों पर बिकने वाली विश्व प्रसिद्ध असम की चाय का ऐतिहासिक सफर तह-दर-तह घटनाओं का संसक्त रूप है। एक कप गर्म प्याली चाय और इस पेशे से जुड़े लोगों की कहानी अपने आप में एक दस्तावेज है।

असम में अति प्राचीन काल से चाय को औषधीय पेय के रूप में बेहद उपयोगी माना जाता है। जुकाम, ज्वर और ठण्ड से बचने के लिए खासकर सिंग्फो जनजाति के लोग चाय को औषधि के रूप में इस्तेमाल करते थे। असम के जंगलों में मौजूद इन चाय के पौधों की ओर ब्रिटिश अधिकारियों का ध्यान गया और उन्हें असम में व्यापार का एक अच्छा साधन प्राप्त हो गया। असम के कुछ समुदायों में पहले से ही चाय का दैनिक व्यवहार प्रचलित था। किन्तु इस बेशकीमती वनस्पति का कोई लिखित दस्तावेज न होने के कारण सन् 1823 ई० में सी. ए. ब्रूस को आधिकारिक तौर पर चाय की खोज का श्रेय प्राप्त हो गया। देउराम तासा अपनी कविता 'बनुवार आगमन' में इस बात की ओर संकेत करते हुए कहते हैं "सिंग्फौ पाहारत आसिल बिसा गाम चाह गछर सिनाकि दिले ब्रूसर ह'ल नाम/ अनुपूंग रूपे बहू गवेषणा करि/ ब्रिटिशे पातिले आहि चाहनिर बारी"[1] (अर्थात् सिंग्फौ समाज में पहले से ही चाय का प्रचलन था किंतु ब्रूस को चाय के खोज का श्रेय दिया गया। तत्पश्चात् बहुत गवेषणा व प्रयोग करके ब्रिटिशों ने चाय बागान और उद्योगों की स्थापना की।) इसके लिए इंग्लिश सोसाइटी ऑफ आर्ट्स की ओर से ब्रिटिश अधिकारी सी.ए. ब्रूस को विशेष रूप से सम्मानित भी किया गया था। सन्1837 ई० में असम में पहले प्रायोगिक चाय उद्योग की स्थापना हुई। यह चाय उद्योग असम के डिब्रूगढ़ जिले के 'चाबुआ' नामक एक छोटे से अंचल में स्थापित हुआ। 'चाबुआ' असमिया भाषा के दो शब्दों के

योग से बना है जिसका शाब्दिक अर्थ है – 'चा' यानी चाय और 'बुआ' अर्थात् बोना। *'चाबुआ'* नाम से ही इस बात की सहज प्रतीति हो जाती है कि इस अंचल में पहली बार प्रायोगिक तौर पर चाय का पौधा लगाया गया था। चाय उत्पादन के कुछ सैम्पल भारत की तत्कालीन राजधानी कलकत्ता भेजे गये तथा वरिष्ठ ब्रिटिश अधिकारियों की स्वीकृति के बाद सन् 1838 ई० में असम से इंग्लैंड पहली बार चाय का निर्यात हुआ। इसके एक वर्ष बाद सन् 1839 ई० में इंग्लैंड से पाँच लाख रुपये का वित्तीय सहयोग प्राप्त हुआ जिससे असम की पहली चाय कंपनी "असम टी कंपनी" की स्थापना शिवसागर जिले के नाज़िरा अंचल में हुई। यहाँ से असम के चाय उद्योग की वाणिज्यिक यात्रा प्रारंभ होती है। कालांतर में असम के ब्रह्मपुत्र घाटी और बराक घाटी के विभिन्न अंचलों में तेज़ी से सैकड़ों चाय उद्योग व बागान खोले गए। उस समय असम में औपनिवेशिक सत्ता अपने चरम पर थी। चाय उद्योग के विस्तार हेतु ब्रिटिश शासन के सम्मुख दो बड़ी चुनौतियाँ थीं। पहला, चाय की खेती के लिए भूमि और दूसरा, चाय बागानों के रख-रखाव हेतु श्रमिकों की आवश्यकता। 'न्यूनतम निवेश में अधिक मुनाफा' वाली इस व्यापारिक नीति से चलने वाले अंग्रेजों ने सबसे पहले तो असम राज्य के ही स्थानीय लोगों को मजदूर के रूप में भर्ती करने की योजना बनायी। इसके लिए 'वेस्टलैंड ग्रांट रूल्स 1838' के तहत विदेशी सरकार ने असम के मूल निवासियों से उनकी निजी जमीन को छलपूर्वक हथियाना प्रारंभ किया। ताकि स्थानीय लोगों के पास मजबूरन चाय उद्योगों में काम करने के अलावा अन्य कोई विकल्प शेष न बचे। उस समय के सिंग्फो, मटक और मतिबार समुदाय के मुखिया ही स्थानीय लोगों में विशेषकर कछारी, कूकी, नागा, सिंग्फों आदि जनजातीय लोगों को चाय उत्पादन से जुड़ने के लिए प्रोत्साहित करते थे। समाज के ये प्रमुख लोग ब्रिटिश अधिकारियों के लिए मजदूर लाने में मध्यस्थ की भूमिका निभाते थे। किंतु यह नीति बहुत दिनों तक नहीं चली। इस नीति की विफलता के प्रमुख कारण कुछ इस प्रकार हैं-

* पहला, अधिकतर स्थानीय लोग अपनी जमीन पर कृषि-कार्य में रुचि रखते थे।
* दूसरा, चाय बागानों में कठिन परिश्रम के एवज में प्राप्त आय कृषि के मुकाबले बहुत क्षीण थी।
* तीसरा, अंग्रेजों की कूटनीतियों व दमन चक्रों के बनिस्पत ये लोग आराम से अपनी शर्तों पर जीविकोपार्जन के इच्छुक थे।
* असम में चाय बागानों के लिए जंगलों को काटकर चाय खेती के अनुकूल उर्वर बनाना अत्यंत श्रम साध्य था। जंगलों में काम करने से मलेरिया, काला-ज्वर तथा अन्य जानलेवा महामारियों के भय से भी लोग चाय उद्योग से जुड़ना नहीं चाहते थे।

* असम में मोवामरिया विद्रोह (1770-1775ई०), बर्मा आक्रमण (1819-1824ई०) आदि ऐतिहासिक युद्धपरक घटनाओं में युवा पीढ़ी के जुड़ जाने के कारण भी अंग्रेजों को असम में युवा मजदूर नहीं मिल रहे थे।

जैसा कि हम सभी जानते हैं चाय उद्योग प्रमुखतः मानव श्रम पर आधृत है और उस समय विदेशों में चाय की बढ़ती माँग की आपूर्ति करने के लिए ब्रिटिश व्यवस्था को अधिकाधिक श्रमिकों की आवश्यकता थी। समस्या यह थी कि एक ओर असम के स्थानीय जन चाय उद्योग में काम करने में न ही पारंगत थे और न ही चाय की खेती को इच्छुक थे। यह कहना भी गलत नहीं होगा कि विदेशी अधिकारी असम के लोगों को झूठे प्रलोभन देने या चाय उद्योग की ओर आकर्षित करने में सफल नहीं हो पाये। शुरू में चाय उद्योग में केवल कछारी, कुछ नागा तथा सिंग्फों लोग ही मजदूरी करते थे। अतः इतने कम मजदूरों में चाय की माँग की आपूर्ति करना असंभव था। ऐसे में ब्रिटिश सरकार के पास दूसरे स्थानों से मजदूरों को लाने के अलावा और कोई विकल्प नहीं था। अतः सबसे पहले ब्रिटिशों द्वारा सिंगापुर से खासकर चीनी मजदूरों को असम लाया गया। लेकिन ये मजदूर चाय उद्योग या चाय बागानों में काम करने में उतने पारंगत नहीं थे। इनके लिए अंग्रेजी सरकार को अधिक व्यय करना पड़ता था। अंततः भारत में व्याप्त दरिद्रता, बेरोजगारी का लाभ उठाते हुए ब्रिटिशों ने यह निश्चय किया कि चीनी मजदूरों के बजाय भारतवर्ष के ही विभिन्न प्रांतों से मजदूरों को लाया जाए तो वह ज्यादा किफायती होगा।

अतः सन् 1841 ई० में पहली बार बिहार (वर्तमान झारखंड) के छोटानागपुर अंचल से मजदूरों को *'असम टी कंपनी'* में श्रम कराने के उद्देश्य से लाया गया। उसके बाद से यह सिलसिला सौ वर्षों से भी अधिक समय तक, लगभग सन् 1960 ई० तक जारी रहा। आजादी के बाद असम सरकार ने राज्य में व्याप्त तमाम आर्थिक, राजनीतिक एवं सामाजिक समस्याओं पर ग़ौर करते हुए सन् 1960 ई० के बाद अन्य राज्यों से चाय उद्योगों में काम करने के लिए मजदूरों को लाने पर रोक लगा दी। भारत के भिन्न प्रान्तों यथा- पश्चिम बंगाल, बिहार, झारखंड, उत्तर प्रदेश, उड़ीसा, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, आन्ध्रप्रदेश, महाराष्ट्र आदि से असम के चाय बागानों में काम करने के लिए जिन श्रमिकों को लाया गया वास्तव में वे ही *'चाय जनगोष्ठी'* हैं। ये वस्तुतः किसी एक जाति, भाषा और संस्कृति के नहीं हैं। बल्कि इनका संबंध भिन्न भाषाई और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के जातीय तथा आदिवासी समुदायों से है। ये श्रमिक जन स्वभाव से बेहद निश्छल और भोली प्रवृत्ति के हैं। गरीबी,

कष्टप्रद जीवन और बेरोजगारी जैसी समस्याओं से अभिशप्त इन श्रमिकों को तमाम तरह के झूठे प्रलोभन देकर इन्हें असम लाया गया। उस समय कुछ श्रमिक अपने जीवन के दुखों-तकलीफों से मुक्ति पाने हेतु असम की ओर आव्रजित हुए तथा जो लोग नहीं आना चाहते थे उन्हें जबरन मार-पीट कर लाया गया। निःसंदेह चाय श्रमिकों को असम आकर रोजगार का नया अवसर तो प्राप्त हुआ परन्तु इसकी कीमत उन्हें अपने खून और पसीने से चुकानी पड़ी। इन लोगों को 'सरदारी व्यवस्था' के तहत बागानों में भर्ती किया जाने लगा। दरअसल, सरदारी व्यवस्था में विभिन्न राज्यों से श्रमिक लाने के लिए सरदार नियुक्त किया जाता था जिसे 'आरकाठी' अर्थात् बिचौलिया या मध्यस्थ भी कहा जाता है। ये सरदार श्रमिकों को मुफ्त यात्रा तथा अच्छे रोजगार का प्रलोभन देकर बागानों में लाते थे। 'The Tea Labourers of North East India' नामक पुस्तक में उल्लेख किया गया है कि – "The only legislation found at that time, regulating the Managers and the Labourers was comprised in Section 492 of the IPC and Act XIII of 1859 (Workmen's Breach of Contract Act). Since then a series of Act was passed to protect the recruits and the Act of 1914 put an end to contractor system and established what is known as the garden *Sardari System* of recruitment."[2] अर्थात् सन् 1859 में IPC धारा 492 और एक्ट XIII (वर्कमेंस ब्रीच ऑफ कॉन्ट्रैक्ट एक्ट) के तहत मैनेजर और श्रमिकों को नियंत्रित करने हेतु कानून था। उसके बाद से श्रमिकों की सुरक्षा हेतु कई अन्य कानून भी पारित किये गये। 1914 के एक्ट के बाद से ही कांट्रेक्टर व्यवस्था के बजाय बागानों में नई भर्ती के लिए सरदारी व्यवस्था का प्रचलन हुआ। इन आव्रजित चाय श्रमिकों को सबसे पहले असम के तत्कालीन गोवालपारा जिले के धुबरी अंचल (वर्तमान गोवालपारा और धुबरी असम के दो स्वतंत्र जिले हैं) में लाकर जबरन करारनामे पर अंगूठा लगवाया गया। इस तरह से ये सभी अशिक्षित, दरिद्र श्रमिकजन बंधुआ मजदूर की भाँति आजीवन ब्रिटिश सरकार के शर्ताधीन हो गये। शोषण के चक्रव्यूह से मुक्ति पाना इनके लिए नामुमकिन-सा प्रतीत होने लगा।

बहरहाल, भिन्न भाषा, जातीय समुदाय एवं संस्कृति के लोगों के असम आकर यहाँ की परिस्थिति, परिवेश और संस्कृति के अनुकूल स्वयं को ढालने से एक नए वैविध्यपूर्ण समाज का गठन हुआ जिसे "चाय जनगोष्ठी" की संज्ञा दी गयी। चाय जनगोष्ठी के प्रसिद्ध साहित्यकार तथा लोकविद देउराम तासा कहते हैं कि "भारतर विभिन्न प्रांतर परा अहा भिन्न-भिन्न कृष्टि-संस्कृतिर अनेक जाति-जनजाति गठित चाह-मूलीय मानुहखिनिक सामग्रिकभावे 'चाह जनजाति' बुली अभिहित करिलेउ तेउलुक प्रकृत पक्षे कोनो एकक धर्म,

संस्कृति अथवा जनगोष्ठिर लोक नहय।"[3] (भारत के विभिन्न प्रांतों के भिन्न-भिन्न कृष्टि और संस्कृति के जाति-जनजाति के लोगों को सामूहिक तौर पर 'चाय जनजाति/जनगोष्ठी' कहा जाता है। यद्यपि ये सभी किसी एक धर्म, संस्कृति अथवा जनगोष्ठी के लोग नहीं हैं।) अमेरिका में आयोजित 'The Guardian' नामक मीडिया कांफ्रेंस में असम के चाय बागानों में काम कर रहे मजदूरों से संबंधित तथ्यों के आधार पर उन्हें 'Modern Slaves in Assam' (असम के आधुनिक दास) कहा गया। वैसे तो भारत में दास प्रथा काफी पहले समाप्त हो चुकी थी परन्तु असम के चाय श्रमिकों की अज्ञानता और भोलेपन का फायदा उठाकर युगों-युगों तक इनके साथ दास या बंधुवा मजदूर की तरह व्यवहार किया जाता रहा है। उन पर किये जाने वाले अत्याचार, प्रताड़ना, शोषण आदि पर बेहद बारीकी से इस गोष्ठी में उल्लेख किया गया था। झूठे प्रलोभनों को सच मानकर असम आने वाले ये भोले आदिम जन एक समृद्ध जीवन की आशा में अक्सर कुछ पंक्तियाँ दोहराते थे। पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं -

"चल मिनि आसाम जाबो, देशे बड़ दुःख रे
आसाम जाये सुखे खाबो, आसाम सोनार देश रे"[4]

पंक्तियों का आशय यह है कि ब्रिटिश सरकार के झूठे वादों एवं प्रलोभनों को सुनकर इन भोले, दरिद्र लोगों को अपने दुःख भरे जीवन से निजात पाने की आस मिली। इसीलिए गीत की इन पंक्तियों में ये श्रमिक अपनी पत्नी या प्रेमिका को 'मिनि' कहकर संबोधित करते हुए कहते हैं कि हमारे देश यानी राज्य में बहुत दुःख है। सुना है कि असम सोने का देश अर्थात् राज्य है। अतः हमें वहाँ जाकर ही अपने सारे दुःखों एवं तकलीफों से मुक्ति मिलेगी। हम एक सुखी जीवन व्यतीत कर पाएँगे। ब्रिटिशों के तमाम झूठे प्रलोभनों को सच मान लेने से संथाल मजदूरों के मस्तिष्क में असम की छवि एक अत्यंत समृद्ध राज्य के रूप में बनी। वे गीत के माध्यम से कहते हैं कि असम के चाय बागानों में पैसे की खेती होती है। इसीलिए इन बागानों में से 'झनड़- झनड़' पैसे की आवाज निकलती है। उन्हें भी असम जाकर इस खेती से जुड़ना चाहिए ताकि उनका जीवन भी सुखमय व्यतीत हो सके। संथाली भाषा में गीत की पंक्तियाँ कुछ इस प्रकार ध्वनित हैं-

"चा बारगी चास रेदो
झनड़- झनड़ टाका
मेलान बोईहाड़ चास रेदो
थाड़ी साड़े टाका"[5]

इसीलिए संथाल आदिवासी एक-दूसरे को असम जाने के लिए प्रोत्साहित करते हैं तथा एक समूह में अपनी माटी को छोड़कर असम के चाय बागानों में पैसे बटोरने के लिए निकल पड़ते हैं। इस प्रसंग से संबंधित संथाली लोकगीत की पंक्ति दृष्टव्य है- "बियाल बयल गाड़ी में चा पीये दादा हो/ चल दादा आसाम-काछाड़ हो।"[6] परन्तु इन चाय श्रमिकों की नियति तो कुछ और ही थी। असम आकर इन्हें वास्तविकता का अंदाजा हुआ कि यहाँ दिन-रात के कठिन परिश्रम के एवज में जीवन जीने के लिए न्यूनतम आवश्यकताओं की आपूर्ति भी स्वप्न के समान है। शोषण के कुचक्र में फँसे इन चाय श्रमिकों के सारे सपने जैसे हवाई महल की तरह एक ही पल में ढह गए। चाय श्रमिकों की उस मनःस्थिति को गीत की निम्न पंक्तियों में देखा जा सकता हैं। वे कहते हैं-

"सरदार बोले काम काम
बाबू बोले धरे आन
साहब बोले लिबो पिठेर चाम
उहे आरकठिया .....उहे बिदेशी चाम
फाँकि दिये आनिल आसाम"[7]

तात्पर्य यह है कि खुशहाल जीवन बिताने की आशा लेकर आये इन मजदूरों को यहाँ आकर फुर्सत का एक क्षण भी नसीब नहीं हो रहा था। सरदार, बाबू और साहब आदि सभी बड़े तबके के लोग इनके साथ क्रूर, अमानवीय व्यवहार करते थे, इनका हर संभव शोषण करते थे। उपर्युक्त पंक्तियाँ श्रमिकों के शारीरिक और मानसिक शोषण का प्रमाण हैं। गीत से स्पष्ट है कि किस प्रकार इन मजदूरों को जबरन बागानों में लाकर काम करवाया जाता था। काम में तनिक भी विलम्ब या लापरवाही होने, या फिर उनके द्वारा काम नहीं करने की स्थिति में उनके साथ बदसलूकी की जाती थी। यह बिल्कुल असंवेदनशील और अमानवीय स्थिति का परिचायक था। इसलिए ये चाय श्रमिक कहते हैं कि अंग्रेजी सरकार और आरकठिया या बिचौलिए छलपूर्वक उन्हें तमाम झूठे सपने दिखाकर, प्रलोभन देकर असम ले आये। चाय बागान की पृष्ठभूमि और श्रमिक जीवन को आधार बनाकर निर्मित फिल्म 'हीरो' में भी चाय श्रमिकों की सामाजिक-आर्थिक अवस्था को दर्शाया गया है। इस फिल्म के गीतों में चाय श्रमिकों के साथ हुए छल-छद्म को स्पष्टतः अभिव्यक्त किया गया है-

"फुसलाई के बिटिशे ले आलो आसाम
खुलालो चाय के बागान"[8]

(अर्थात् ब्रिटिश सरकार बहला-फुसलाकर उन्हें चाय के बागानों में काम करने तथा चाय के व्यापार को और अधिक बढ़ाने के लिए असम ले आयी।)

"साहाबे आने रहे कलगाड़ी में चापाईके
घर-बाड़ी छोरे अईली बागाने काम कोरते ले
सोना-रूपा पाते ले
साहाब गेलो बिदेशे चोली मोरे धोनी
जाबो हमरा कहाँ रे घुरी?"[9]

गीत की इन पंक्तियों में चाय श्रमिकों के जीवन की विडम्बनाओं और तकलीफों का चित्रण प्रस्तुत किया गया है। गीत के माध्यम से यह बताया गया है कि ब्रिटिश सरकार द्वारा भारत के विभिन्न राज्यों से श्रमिकों को कोयले के इंजन से चलने वाली ट्रेन में जानवरों की तरह ठूँस-ठूँसकर लाया गया। और, ये चाय मजदूर भी सोना-चांदी(धन) पाने की प्रत्याशा में अपना घर-बार सब छोड़कर यहाँ आ गये। यद्यपि स्वाधीनता संग्राम के बाद ब्रिटिश तो वापस अपने देश लौट गये परन्तु इनके लिए कोई स्थान नहीं है, जहाँ वे जाकर नए तरीके से घर बसाएँ या फिर नए सिरे से जीविकोपार्जन करें। वे आजीवन असम की माटी के प्रति समर्पित रहकर यहीं अपना जीवन निर्वाह करना चाहते हैं।

चाय उद्योगों में प्रमुख रूप से 50 से 60 फीसदी श्रमिक बागानों में ही काम करते हैं। जिसमें से लगभग 80 फीसदी महिला श्रमिक हैं जो मुख्यतः पत्तियाँ तोड़ने का काम करती हैं। महिला श्रमिक इस कार्य से ज्यादा जुड़ी हुई हैं क्योंकि महिलाएँ जितने धैर्य और सफाई के साथ पत्तियाँ तोड़ती हैं उनका मुकाबला पुरुष श्रमिक कभी नहीं कर सकते। श्रमिक चालान के पहले चरण में केवल पुरुष श्रमिकों को ही लाया गया। परंतु ये पुरुष श्रमिक समय-समय पर अपने परिवार से मिलने जाने की माँग करते थे। कुछ मूल स्थान को लौटना चाहते थे। इसीलिए चालान के दूसरे चरण में श्रमिकों को पूरे परिवार के साथ लाने की योजना बनायी गयी। इससे असम के चाय उद्योग को महिला श्रमिक के रूप में और सस्ते मजदूरों का सान्निध्य प्राप्त हुआ। इसके अलावा भी महिलाओं को चाय उद्योग में प्रमुखता देने के कई कारण थे: पहला, उस समय ज्यादातर महिलाएँ घरेलू कृषि से जुड़ी हुई थीं जिसमें दो पैसे उनके हाथ में आने की संभावना नहीं के बराबर थी। अतः उन्हें चाय बागानों की ओर आकर्षित करना आसान था। दूसरा, महिलाओं को घर की आर्थिक जरूरतों में सहायता करने के साथ ही जीवन के स्तर को बेहतर बनाने का उचित साधन मिल रहा था। तीसरा, गरीबी, बेरोजगारी, भूखमरी, कुपोषण आदि अनेक समस्याओं से निजात पाने की संभावना भी दिख रही थी। किन्तु रोजगार के साथ ही इन महिलाओं का शारीरिक और मानसिक शोषण भी किया जाने लगा। चाय श्रमिकों को असम लाकर जानवरों की तरह कच्ची झोपड़ी में रखा गया था। उचित भोजन, शौच, पानी आदि न्यूनतम आवश्यकताएँ भी इन चाय श्रमिकों

को मुहैया नहीं करायी जाती थी। भूख और शारीरिक शोषण के कारण कितने ही श्रमिकों की मृत्यु हो गयी। इस संदर्भ में 'कृष्णकांत हेंदिकै असम राज्यिक मुक्त विश्वविद्यालय' के द्वारा प्रदत्त तथ्यों का विवरण कुछ इस प्रकार है- "The labourers had to live in very unhygienic environment, paid little, fed too less and the magnitude of human exploitation was beyond imaginations. The Assam Company brought 2,272 labourers between December 1859 and November 1861 out of which 250 died on transit. Between April 1861 and February 1862 the company recruited 2,569 labourers of which 135 died on the way and 103 absconded. Between May 1863 and May 1866 a total of 84,915 32 labourers were arrived in Assam out of which 30,000 had died by June 1866. This was the most unfortunate and sad story of death and misery in the colonial history of Assam."[10] सन् 1841 ई० से प्रारंभ चाय श्रमिकों के असम राज्य में आव्रजन के आँकड़े[11] –

वर्ष	आव्रजित श्रमिक संख्या (पुरुष, महिला एवं बच्चे)
पहली बार 1841 में	652
1859 – 1866	853973
1902 – 1910	315431
1911 – 1920	785633
1921 – 1930	309453
1931 – 1938	296398

(तालिका संख्या 3.1: सन् 1841-1938 ई० तक श्रमिकों का असम आव्रजन)

वर्तमान समय में चाय श्रमिक असम के स्थायी निवासी के रूप में यहाँ के परिवेश, रहन-सहन, आचार-व्यवहार व संस्कृति के अनुरूप स्वयं को ढाल चुके हैं। परन्तु, इनमें आज भी कुछ ऐसे समुदाय हैं जो अपनी ठेठ संस्कृति और अस्मिता को विशेष महत्व देते हैं। चाय जनगोष्ठी के लोग वर्तमान असम के दरंग, शोणितपुर, नगावँ, जोरहाट, गोलाघाट, शिवसागर, डिब्रूगढ़, तिनसुकिया, कछार, हैलाकांदी, करीमगंज, कोकराझार, उदालगुड़ी, लखीमपुर आदि विभिन्न जिलों के निवासी हैं। वर्तमान असम की कुल जनसंख्या का लगभग 20 % अर्थात् करीब 70 लाख चाय जनगोष्ठी के लोग हैं। चाय जनगोष्ठी के लोगों को कुली, बागानिया आदि

कहकर संबोधित किया जाता है। सम्पूर्ण चाय जनगोष्ठी को मुख्यतः दो भागों में बाँटा गया हैं। पहला, बागानिया, बनुआ अथवा चाह मजदूर (The Tea Tribe) तथा दूसरा, बोंगल अथवा प्राक्तन चाह मजदूर (The Ex-Tea Tribe)। 'चाह मजदूर' से तात्पर्य है चाय जनगोष्ठी के वे श्रमिक जो चाय बागानों में काम करते हैं और 'लेबर लाइन' या चाय उद्योग द्वारा मुहैया कराये गये लेबर क्वार्टर में रहते हैं। ब्रिटिश काल से ही इन्हें समाज से काट कर बिल्कुल अलग- थलग रखा जाता है ताकि ये समाज के प्रत्यक्ष प्रभाव और प्रगति से अछूते रहें और इनका शोषण आसानी से किया जा सके। और, 'प्राक्तन चाह मजदूर' से तात्पर्य चाय जनगोष्ठी के अंतर्गत आने वाले उन लोगों से है जो विदेशी सरकार द्वारा असम के चाय उद्योग में काम कराने के उद्देश्य से तो लाये गये थे लेकिन वे वर्तमान समय में इस पेशे को छोड़ किसी अन्य आजीविका को अपना चुके हैं या चाय बागानों से अवकाश प्राप्त कर चुके हैं। ध्यातव्य है कि भारत के नाना प्रांतों से आये भिन्न संस्कृति और परंपरा का पालन करने वाले चाय श्रमिकों की कुछ जातियाँ अपना मूल स्थान बिल्कुल भूल चुकी हैं। इनमें से कुछ लोग अपनी भाषा को विस्थापित कर चुके हैं तो कुछ आपस में पूरी तरह से मिश्रित हो चुके हैं। चाय जनगोष्ठी में लगभग सौ से भी अधिक जाति और आदिवासी समाज के लोग हैं। इनके कुल जातीय समूहों की संख्या को लेकर विद्वानों में मतभेद है। चाय जनगोष्ठी के साहित्यकार देउराम तासा की पुस्तक 'चाह बागिसार जाति-जनजाति' में कुल 75 तथा सुशील कुर्मी की पुस्तक 'चाह बागिसार कथा' में कुल 121 भिन्न जातीय समुदायों का उल्लेख मिलता है। इसके अलावा स्व. श्री गणेश चंद्र कुर्मी जी की पुस्तक 'असमर चाह जनगोष्ठी नृगोष्ठीगत आरु सामाजिक परिचय' में लगभग 124 समुदायों का परिचयात्मक विवरण मिलता है। असम की चाय जनगोष्ठी के भिन्न सामाजिक समुदायों में काँवर, उराँव, कुर्मी, किषाण, कोइरी, कोल, भील, कुमार/ कुम्हार, केवट, कर्मकार, कालिंदी, कांहार, करोवा, खेरवार, गराइत, गोंसाई, गोंड, गंजू, गोवाला, घाँसी-नाइक, घटवार, साउताल/ संथाल, साउरा, चेरु, तेली, मिर्धा, देवमाझि, पातर, पाईक, प्रधान, पुरान, पानिका, परजा, पांडव तेलुगु, बराईक, बेदिया, बाग्ति, बनिया, बाउरी, बढ़ई, बनिक दास, ताँती, भूइयाँ, भगत, भूमिज, मुंडा, मानकी, माहाली, मारार, मैरा, राजोवार, राजपूत, रौतिया, लोधि, हाजाम, चर्मकार, जोलहा, चाषा, चराँग, कंध, कोया, आर्यमाला, असुर, खड़िया, तंग्ला, दुसाध, दंडारी, धनवार, नायक, नागवंशी, पान, बासफोर, माल, मल्लाह, माली, रबिदास, रजक इत्यादि प्रमुख हैं। ये सभी कोल-मुंडा, द्रविड़ और आर्य वंश के हैं। इनमें से कुछ प्रमुख जातीय समुदायों का सामान्य परिचय इस प्रकार है-

* *असुर:* भारत के प्राचीन आदिवासी समुदाय असुर के अंतर्गत प्रमुखतः आंध्रप्रदेश, कर्नाटक महाराष्ट्र, पश्चिम बंगाल, झारखंड, तथा बिहार के निवासी हैं। ऑस्ट्रो-एशियाटिक परिवार से संबद्ध ये आदिम जन लोहे के उत्पादन तथा लोहे से तमाम तरह के अस्त्र-शस्त्र के निर्माण कार्य से जुड़े हैं। असम की चाय जनगोष्ठी के लोहार अथवा कर्मकार समुदाय के लोग असुरों के ही वंशधर हैं। वर्तमान समय में ये लोग चाय बागान की संपर्क भाषा *असमिया सादरी* अर्थात् असमिया और बांग्ला से प्रभावित सादरी भाषा का प्रयोग करते हैं। ये असम में पालमा, खेदुवा, हानियार, बेंचरुवा, आगारिय, तरियाल आदि उपनाम से जाने जाते हैं। असुर समाज में हानियार गोत्र को सबसे श्रेष्ठ और तरियाल को निम्न कोटि का माना जाता है। असुर *'सिं बोंगा'* अर्थात् सूर्य को प्रमुख देवता मानकर माघ-फाल्गुन के महीने में उनकी अराधना करते हैं। इसके अलावा इस समाज में आषाढ़ी पूजा, दुर्गा पूजा, काली पूजा, मनसा पूजा, बड़ पहाड़ी पूजा, गरया पूजा आदि सांस्कृतिक व्रत-उत्सव का भी प्रचलन है। इन उत्सवों में कबूतर, हंस, मुर्गी, बकरी, सूअर आदि की बलि देकर देवताओं को प्रसन्न किया जाता है। इस समाज में एक ही गोत्र में विवाह करना वर्जित है। विवाह संस्कार में वर द्वारा वधू को लोहे की चूड़ी पहनाने की एक विशेष परंपरा है।

* *उराँव:* उराँव अथवा कुड़ुख मूलतः बिहार, झारखंड, पश्चिम बंगाल, उड़ीसा, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, आदि राज्यों के निवासी हैं। दक्षिण भारत के कुर्ग से प्रव्रजित होकर झारखण्ड में इनका प्रवेश हुआ। झारखण्ड के मुंडा लोगों का काफी प्रभाव इस समाज में दृष्टव्य है। मीन्ज, लाकड़ा, केरकेटा, कावा, टोप्पो, धानुवार, कुजु आदि इस समुदाय के अनेक गोत्र हैं। इस समाज में कावा गोत्र को सर्वाधिक प्रतिष्ठा प्राप्त है। उराँव समाज में प्रति बारह वर्ष के अंतराल पर माघ-फाल्गुन के महीने में *'मारांग-बुंग'* (चंद्र) देव की पूजा की जाती है। उराँव आदिवासी समाज में चन्द्र प्रमुख उपास्य देवता हैं। इस समाज में बलि प्रथा के जरिये उपास्य देव/देवी को प्रसन्न करने का प्रयास किया जाता है। इसके अलावा ग्राम देवता की पूजा, चारुल पूजा, सूर्याही पूजा, साँहराई पूजा, बर पहाड़ी पूजा आदि प्रमुख मांगलिक अनुष्ठानों का सामूहिक आयोजन कर समाज कल्याण की कामना की जाती है। पहले उराँव समाज में घोटूल प्रथा का भी प्रचलन था। ये आदिम जन हाथ में दाव-कुल्हाड़ी, तीर-धनुष आदि लेकर जंगलों में घूम-घूमकर शिकार करने के बेहद शौक़ीन हैं। पुरुष-महिला सभी *'खदा'* अर्थात् टैटू का अंकन अपने शरीर के विभिन्न अंगों पर करवाते हैं। इनमें हिन्दू और इसाई दोनों धर्म के अनुयायी हैं।

* *मुंडा:* ऑस्ट्रिक परिवार का एक प्रमुख आदिवासी समाज है मुंडा। ये मूलतः बिहार, झारखंड, पश्चिम बंगाल और उड़ीसा के निवासी हैं। यह आदिवासी समुदाय प्रकृति का उपासक है। *'सिं बोंगा'* मुंडा समाज के प्रधान देवता हैं। इस समाज में अपनी विशिष्ट रीति-नीति, आचार-व्यवहार और जनविश्वास प्रचलित है। वैसे तो इस समुदाय की अपनी मातृभाषा मुंडारी है किन्तु असम आने के पश्चात् बहुत से ऐसे मुंडा परिवार हैं जो अपनी मातृभाषा को विस्मृत कर चुके हैं। चाय जनगोष्ठी में मुंडा समुदाय की जनसंख्या पर्याप्त है। मुंडा समाज अनेक किल्लियों अथवा गोत्रों में विभक्त है। जिनमें आइंद, बार्ला, हेमरम, तिरु, हर, गुरिया, कंगारी, चांगा इत्यादि प्रमुख हैं। ये आदिवासी जन सूर्य के उपासक हैं। इनमें *हापरम* यानी पूर्वजों की आत्मा की शांति तथा किसी भी तरह की क्षति से बचने के लिए घर के आस-पास कहीं कोने में मुर्गे की बलि देने की प्रथा प्रचलित है। इसके अलावा इस समुदाय में बाताउली, साँहराई, माघ पर्व का हर्षोल्लास के साथ आयोजन होता है।
* *संथाल:* असम की चाय जनगोष्ठी में संथाल एक प्रमुख आदिवासी समाज है जिनका आव्रजन पश्चिम बंगाल, बिहार, झारखण्ड, उड़ीसा आदि राज्यों से हुआ है। संथाल समाज में कुल बारह गोत्र हैं- हाँसदा, मुर्मू, किस्कू, हेम्बरम, टुडू, सोरेन, बास्के, बेस्रा, पाउरिया, बेडेया आदि। इन गोत्रों में भी भिन्न उपजातियाँ हैं। ध्यातव्य है कि संथालों में भिन्न गोत्र में ही विवाह होता है। उक्त बारह गोत्रों के अनुरूप संथालों में कर्म का विभाजन हुआ है। यथा- मुर्मू इस समाज में पुरोहित हैं, सोरेन- सिपाही, किस्कू- क्षत्रिय, हाँसदा- खेतिहर हैं, आदि। इनकी मातृभाषा संथाली है जो भारतीय संविधान की अष्टम अनुसूची में शामिल है। असम में कुछ संथाल हिन्दू धर्म तथा कुछ ईसाई धर्म को मानते हैं। इस समाज में प्रमुख देवता के रूप में चन्द्र की आराधना की जाती है। इसके अतिरिक्त साँहराई पर्व, चारुल पर्व, अयोध्या पूजा आदि भिन्न सांस्कृतिक अनुष्ठानों में इस समाज के रीति-रिवाज और विश्वास की प्रतिच्छवि देखने को मिलती है।
* *साउरा:* साउरा जनजाति प्रमुख रूप से उड़ीसा, मध्य प्रदेश, तमिलनाडु, पश्चिम बंगाल, झारखंड, बिहार आदि राज्यों की निवासी है। किंडाल साउरा, सने साउरा, काप साउरा, सबर साउरा आदि इस जनजाति के प्रधान गोत्र है। साउरा समाज के अधिकतर लोग कृषि कार्य से जुड़े हुए हैं। इस समाज में प्रचलित पर्व-त्योहार ऋतुओं पर आधारित हैं। जैसे- आम पूजा, रहर पूजा, खामालू पूजा आदि। समयानुरूप ऐसे पर्वों के आयोजन के बिना नये फल अथवा फसलों को खाना वर्जित है। ऐसे अनुष्ठानों में बलि

प्रथा के साथ ही देवताओं को मद्य भी अर्पित किया जाता है। पूजा के अवसर पर भैंसे की बलि देना अत्यंत शुभ और लाभकारी माना जाता है। साउरा समाज के लोगों के हाथ में फार्सा और तीर-धनुष का होना पौरुष की निशानी है। इस समाज में किसी व्यक्ति के देहावसान पर धेद्रा (ढांक), तुदुम (नगाड़ा), शहनाई आदि लोक वाद्यों की करुण ध्वनि के साथ सामाजिक सूचना दी जाती है। सात अथवा नौ दिन पर अंत्येष्टि क्रिया का समापन होता है। इनमें विवाह के अवसर पर वर पक्ष चूड़ी, तीर और हाड़िया आदि लेकर वधू पक्ष के सम्मुख विवाह का प्रस्ताव रखते हैं।

* *गोंड:* बिहार, झारखंड, उड़ीसा, मध्य प्रदेश, कर्नाटक आदि राज्यों से असम आये इस आदिवासी समुदाय को गोंड अथवा गौड़ भी कहा जाता है। इस समुदाय की कौमरा, कतलाम, सलाम, पुरडूरी, पद्राम, पुराम, लेबका, कुंजाम, मांगरा, माड़ई आदि लगभग 25 उपजातियाँ हैं। गोंड समाज में बैशाख महीने में *बड़देव* पूजा को प्रमुख जातीय उत्सव के रूप में सामूहिक तौर पर मनाया जाता है। कार्तिक महीने की अमावस्या को गोंड आदिवासी वंश की पूजा के तौर पर शिव-पार्वती को पूजते हैं। इस समाज में काली पूजा, लक्ष्मी करम, फगुवा, ग्राम पूजा आदि का भी आयोजन किया जाता है। गोंड समाज में बाल विवाह तथा विधवा विवाह का प्रचलन है। बाल विवाह के पश्चात् उपयुक्त आयु में वधू का गौना/गवना कराया जाता है। इस समाज में उपजाति के अनुसार शरीर के अंगों पर गोदना अंकित कराने का रिवाज है। लाल रंग के वस्त्र को गोंड समाज का जातीय चिह्न माना जाता है।

* *कंध:* चाय जनगोष्ठी में कंध समुदाय के लोग अधिकतर उड़ीसा से आये हुए हैं। इसके अलावा कुछ आन्ध्रप्रदेश और मध्यप्रदेश के भी मूल निवासी हैं। जमींदार कंध, जानी कंध, हालधीया कंध आदि भिन्न भागों में कंध समाज स्तरीकृत है। इनमें जमींदार कंध उच्च जाति है। इस समाज में दोलयात्रा का आयोजन कर सामूहिक रूप से कुल में सर्वश्रेष्ठ माने जाने वाले आराध्य देव की पूजा-अर्चना करते हैं। इसके अलावा कंध समुदाय के लोग ग्राम देवी की पूजा, पहाड़ पूजा, डांगरिया पूजा, बूढ़ी ठकुरानी पूजा, फगुवा, मकर संक्रांति आदि पर्व-त्योहारों को मनाते हैं। ये स्वयं को नाग, सोना, बाघ, कुम्भ गोत्र का तथा गंगा वंश का मानते हैं। कंध समाज के लोग अपने आदिवासी नियमों का पालन करते हैं। कंध महिलाएँ कानों में 'किचारक', पैरों में 'बाला', नाक में 'माक्ड़ी' तथा गले में रंग-बिरंगी मालाएँ पहनती हैं।

* *खड़िया:* चाय जनगोष्ठी में खड़िया समुदाय की जनसंख्या काफी है। ये प्रमुख रूप से उड़ीसा के पहाड़ी अंचलों, बिहार, झारखण्ड, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश आदि राज्यों से असम लाये गये। दूध् खड़िया, ढेल्की खड़िया, मुंडा खड़िया, कोल खड़िया, पुराण खड़िया आदि विभिन्न उपजातियों में यह समाज विभक्त है। इनमें सुरेन, मैल, आइंद, डुंगडुंग, चराः आदि अनेक गोत्र हैं। मुंडा समाज से इस समाज में काफी साम्य है। ये 'सिं-बोंगा' यानी सूर्य के उपासक हैं। इसके अलावा मारांग बुरु, चारुल पर्व, बड़ पहाड़ी, साँहराई पर्व आदि सांस्कृतिक उत्सव प्रमुखता से मनाये जाते हैं।
* *कोल:* मुंडा जाति से ही कोल समुदाय की उत्पत्ति मानकर इसे कोल-मुंडा भी कहा जाता है। चाय जनगोष्ठी का कोल समुदाय मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़, झारखण्ड, पश्चिम बंगाल आदि राज्यों से प्रव्रजित हुआ है। कोल समाज ठाकुरिया, मामासी, राउतिया, कोल कामार आदि भागों में स्तरीकृत है। इनमें ठाकुरिया कोल को समाज में उच्च वर्ण तथा कोल कामार को निम्न वर्ण माना जाता है। कोल समुदाय में चैत नवमी अथवा दोला देव की पूजा को विशेष मान्यता प्राप्त है। यह मूलतः कृषि आधृत उत्सव है जिसमें नौ दिनों तक *झावा* अर्थात् बीजांकुर की विधिवत पूजा की जाती है। इस समाज में दुर्गा पूजा, काली पूजा और सूर्याही पूजा का भी विधिवत आयोजन होता है। कोल समाज में एक ही गोत्र में विवाह करना निषिद्ध है। शिशु-जन्म के अवसर पर इस समुदाय के लोग सकुटुंब लड़का होने पर नर सूअर तथा लड़की होने पर मादा सूअर का माँस खाते हैं।
* *भील:* वैसे चाय जनगोष्ठी में भील आदिवासी अल्पसंख्यक ही है। इनका मूल स्थान आन्ध्रप्रदेश, गुजरात, कर्नाटक, मध्यप्रदेश, और राजस्थान है। द्रविड़ जनगोष्ठी के इस आदिवासी समुदाय में गुरलवा, जेईसयार, करावाई, माझुरैया, राम/ रामा और रावत आदि उपजाति के लोग हैं। भील शब्द का अर्थ धनुष है। इसलिए भील आदिवासी तीर-धनुष चलाने में निपुण होते हैं। करुवा, बीरहर आदि समुदाय के लोग भीलों के ही वंशज माने जाते हैं।
* *भूमिज:* मुंडा शाखा के खेड़वार या खेरवार जाति से भूमिज समुदाय की उत्पत्ति हुई है। प्रमुख रूप से बिहार, झारखण्ड, उड़ीसा और पश्चिम बंगाल के मूल निवासी भूमिज, दो भागों में विभाजित है। यथा- मुंडा भूमिज और बराही भूमिज। इस समाज में साँहराई पर्व अर्थात् गायों को रोग-व्याधि से बचाने हेतु विधिवत पूजा-अर्चना की जाती है। इसके अलावा बाघूत पूजा, धरम पूजा, करम पूजा, टुचू पूजा, बड़ पहाड़ी पूजा, चारुल पूजा, आखान यात्रा आदि प्रमुख उत्सव हैं। भूमिज समाज में कर्णवेधन संस्कार

की विशेष मान्यता है। इस समाज में विवाह संस्कार में वर-वधू द्वारा 'आम और बकूल' खिलाने की प्रथा प्रचलित है।

* *कोया:* कोया एक पहाड़ी आदिवासी समाज है। ये मूलतः आंध्रप्रदेश, छत्तीसगढ़, उड़ीसा, कर्नाटक आदि राज्यों के बीहड़ जंगलों और पहाड़ी इलाकों के निवासी हैं। प्रमुख रूप से असम के तिनसुकिया और डिब्रूगढ़ जिले के चाय बागानों में रहने वाले इस समुदाय की जनसंख्या बहुत कम है। इनकी अपनी मातृभाषा कोया है। इसके अतिरिक्त ये सादरी और असमिया भाषा में में सम्प्रेषण करते हैं।
* *ताँती:* चाय जनगोष्ठी के तंतुवाय अथवा ताँती समाज के लोग उड़ीसा, पश्चिम बंगाल, बिहार, झारखंड के मूल निवासी हैं। चाय श्रमिक समाज में इनकी पर्याप्त जनसंख्या है। ताँती समाज में सोन, दीप, नाग, मुरगी, जगदला आदि भिन्न गोत्र हैं। इस समाज के लोग नन्द, ताँती, सनातन दीप, कुलदीप, छत्रिया, नाग, चासनी, पातर, नायक, मल्लिक, ताड़ीया, दास, बाग आदि उपनामों से विख्यात हैं। इनमें चैत्र की संक्रांति का दंड नाच यानी शिव की पूजा, पल्ला नाच, इन्खुर पूजा, फुसपुनी पूजा, तुलसी पूजा, ताँतसाल पूजा, मंगला पूजा, चण्डी पूजा आदि सांस्कृतिक उत्सवों का सामूहिक आयोजन किया जाता है। उड़िया भाषा के अतिरिक्त बागान की सादरी भाषा इनके संप्रेषण की भाषा है।
* *कुर्मी:* इस समाज के लोग बिहार, उत्तर प्रदेश, उड़ीसा, आदि राज्यों से असम के बागानों में श्रम कराने हेतु लाये गये थे। वर्तमान समय में इस समाज के बहुत से लोग चाय बागान के पेशे को छोड़ चुके हैं। लोकमान्यता के अनुसार कुर्मी भगवान बुद्ध, हनुमान, स्वामी तुकाराम के वंशधर हैं। यह समाज बहुत-सी शाखाओं-प्रशाखाओं में विभक्त है। असम में ये कुर्मी/कुर्मि, महतो, सिंह, चौधरी, कौराहा आदि उपनाम से जाने जाते हैं। चाय जनगोष्ठी में कुर्मी समाज एक प्रमुख जनसंख्या बहुल समुदाय है।
* *तेलुगु:* आंध्रप्रदेश, मद्रास और तेलंगाना से आये हुए चाय श्रमिक तेलुगु हैं। इनमें विभिन्न जाति और उपजातियाँ हैं। जैसे- कापू, माईत कल्लू, गाजलल्लू, बापलल्लू, राव, गल्ल्ड, एलमडू आदि। चाय जनगोष्ठी के बहुर तेलुगु संप्रदाय के लोग हिन्दू धर्म में दीक्षित हुए हैं। ये अपनी जातीय मान्यताओं के अतिरिक्त हिन्दू धर्म के पर्व-त्योहारों और मान्यताओं का अनुसरण करते हैं। माह-दि-कांडा, राम उल्लू, सूति, शहनाई, डापू, मंगलमेड़मू आदि तेलुगु समाज के प्रमुख लोकवाद्य हैं।
* *जोलहा/जुलाहा:* बिहार, उत्तर प्रदेश, झारखण्ड आदि राज्यों से बतौर चाय श्रमिक जोलहा समाज के लोग भी लाये गये थे। अपने मूल स्थान पर ये लोग कपड़े की बुनाई करके जीविकोपार्जन करते थे। ये

मूलतः इस्लाम धर्म के अनुयायी हैं। इस समुदाय के लोग प्रमुखतः खरठा, कुरमाली और भोजपुरी भाषा में सम्प्रेषण करते हैं। अहमद, अली, अंसारी आदि जोलहा समुदाय के उपनाम हैं।

असम राज्य के संदर्भ में यह पंक्ति बहुप्रचलित है 'असम देशर केंसा सोन पात बागिसात'। अर्थात् असम देश का कच्चा सोना पत्तों (चाय) के बागीचे में है। कहने का आशय यह है कि असम की चाय की पत्तियों की कीमत सोने की कीमत के बराबर है क्योंकि भारत में विदेशी मुद्रा के आय का एक प्रमुख स्रोत असम की चाय है। अतः निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि असम की चाय जनगोष्ठी प्रमुख रूप से ब्रिटिश शासनकाल में चाय उत्पादन के लिए लाये गये श्रमिकों का समाज है। ये श्रमिकजन असम में चाय उत्पादन के प्रमुख साधन हैं। इन श्रमिकों को झूठे प्रलोभन और वादों के दम पर भारत के भिन्न-भिन्न प्रांतों से असम लाया गया था। शोषण, दमन और अत्याचार करके इनसे जबरन मजदूरी करायी जाती थी। किसी भी तरह से विरोध की गुंजाईश न हो इसके लिए विभिन्न राज्यों के भिन्न-भिन्न भाषी लोगों को एक साथ बागानों में काम कराया जाता था। वर्तमान असम की चाय जनगोष्ठी में लगभग सौ से अधिक आदिवासी और भिन्न जातीय समुदाय के लोग हैं जो अपनी भिन्न संस्कृति और भाषा के बनिस्पत असम में एकत्रित होकर 'चाय जनगोष्ठी' के रूप में सामूहिक अस्मिता और एकता कायम किये हुए हैं।

संदर्भ सूची-

1. (सं.) गणेश चन्द्र कुर्मी, देउराम तासा रचनावली, पृष्ठ संख्या. 503
2. (सं.) सार्थक सेनगुप्त, द टी लेबरर्स ऑफ़ नार्थ ईस्ट इंडिया, पृष्ठ संख्या. 37
3. (सं.) गणेश चन्द्र कुर्मी, देउराम तासा रचनावली, पृष्ठ संख्या. 144
4. (सं.) मिंटू तांती, झर-झर, पृष्ठ संख्या. 02
5. तथ्यदाता: श्री हरि चंद्र कुर्मी, चाँदमारी गाँव, तिनसुकिया (दिनांक: 27.11.2022)
6. वही
7. (सं.) मिंटू तांती, झर-झर, पृष्ठ संख्या. 03
8. http://youtu.be/1yAoAekZB60 (दिनांक: 19.02.2020, प्रातः 10 बजे)
9. http://youtu.be/9Rm40cUbVns (दिनांक: 19.02.2020, प्रातः 10.30 बजे)
10. teaworld.kkhsou.in (दिनांक : 21.10.2019, संध्या: 7.15 बजे)
11. वही

3.2 चाय जनगोष्ठी की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक स्थिति

किसी भी समाज की आतंरिक संरचना, आर्थिक स्थिति, राजनीतिक सरोकारों को ध्यान में रखकर उसकी वर्तमान स्थिति का अवलोकन किया जा सकता है। चाय जनगोष्ठी भिन्न सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के लोगों का समन्वित रूप है। यह समुदाय ब्रिटिश शासन के तमाम शोषणों और दमनों का साक्षी है। प्रख्यात साहित्यकार मेघराज कर्मकार चाय जनगोष्ठी की आरंभिक दशा और श्रमिकों की पीड़ा का उल्लेख करते हुए कहते हैं कि "मानुहर दरे थकामेलार ब्यवस्था नाइ, मानवोचित खाद्य नाइ, भाल औषध पातिर ब्यवस्था नाइ, शिक्षार ब्यवस्था दूरैर कथा। दाबी बा प्रतिबाद करिबलोई वाक् स्वाधीनताउ नाइ।"[1] अर्थात् चाय श्रमिकों को झूठा प्रलोभन देकर असम लाने के बाद उनसे दिन-रात मजदूरी करायी जाती थी। उनके रहने की उचित व्यवस्था, खाद्य, चिकित्सा, शिक्षा आदि किसी चीज की सुविधा नहीं थी। यहाँ तक कि उनसे अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता भी छीन ली गयी थी। किसी भी तरह के प्रतिवाद अथवा विद्रोह की गुंजाइश शेष नहीं थी। ऐसे प्रतिकूल समय में इन श्रमिकों ने परिस्थिति के अनुकूल सामाजिक व्यवस्था कायम की। "आमि जीवने मरणे असमिया"[2] कहने वाले असम के प्रति आजीवन समर्पित इन चाय श्रमिकों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति, शोषण के कारणों, असम की राजनीति में चाय जनगोष्ठी के अवदानों को विस्तार से समझना अपेक्षित है।

सामाजिक स्थिति:

सर्वविदित है कि चाय श्रमिकों का समाज एक मिश्रित समाज है। इसमें विभिन्न भौगोलिक प्रदेशों, सामाजिक-सांस्कृतिक अस्मिताओं के लोगों का समावेश है। अलग-अलग जातीय और जनजातीय समुदायों के एक साथ बागानों में काम करने से एक ऐसे समाज का निर्माण हुआ है जो आज भाषाई और सांस्कृतिक दृष्टि से काफी हद तक संलयित हो चुका है। असम लाये जाने से पूर्व अधिकतर चाय श्रमिक अपने मूल स्थान पर मानसिक और शारीरिक यंत्रणा झेल रहे थे। इनमें से ज्यादातर लोग भूमिहीन कृषक थे जो जमींदारों के शोषण से पीड़ित थे। तमाम दुखों और कष्टों से निजात पाने तथा खुशहाल जीवन की आशा में ये बड़ी आसानी से ब्रिटिश कूटनीति और प्रलोभन के शिकार हो गये। उनके मानस में असम की एक ऐसी भ्रामक छवि उभरी जहाँ जाकर वे अपने सभी सपनों को साकार कर सकते थे। इस संदर्भ में उपर्युक्त भाव से ध्वनित लोकगीत की पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं-

"गागरी में पानी नाई

बाप-दादा रे भाया मुरुली बाजाय

चल मिनि आसाम जाबो

देशे बड़ी दुःख रे

आसाम देशे रे मिनि चाह बागान हारिया ग' "[3]

असम में आने के पश्चात् चाय श्रमिकों को शासन के दोहरे उत्पीड़न को झेलना पड़ा। एक तरफ सामंती प्रथा और दूसरी तरफ ब्रिटिश सरकार के द्वैत शासन व शोषण से पीड़ित इन श्रमिकों के पास असम में कठोर परिश्रम करने के अलावा अन्य कोई विकल्प शेष न था। अतः असम में जंगलों को काटकर उस भूमि को चाय की खेती के अनुकूल बनाने में चाय श्रमिकों के परिश्रम की कोई सीमा निर्धारित नहीं थी। विडंबना तो यह है कि दिन-रात के शारीरिक श्रम के बदले दो जून की रोटी भी ठीक तरह उन्हें नसीब नहीं होती थी। अशिक्षित, दरिद्र चाय श्रमिकों में किसी भी तरह के प्रतिरोध की भावना विकसित न हो इसके लिए उन्हें समाज की मुख्य धारा से काटकर बागानों में बसायी गयी कच्ची बस्ती की ओर धकेल दिया गया। यह स्थिति आज भी बनी हुई है। सुदूर चाय बागानों में बसाये गये लेबर लाइंस अथवा कुली लाइंस में लगभग डेढ़ सौ वर्षों से भी अधिक समय से चाय श्रमिक सपरिवार रहते आये हैं। किन्तु आज भी इन बस्तियों की कच्ची-ढुलमुल तथा जर्जर सड़कें, स्वच्छ पेय जल एवं स्वास्थ्य सेवाओं का अभाव बिजली का संकट आदि तमाम परेशानियाँ अरसे से यथावत कायम हैं। स्थिति यह है कि बरसात के मौसम में कच्चे घर की छावनी से टपकने वाले जल को रोकने के लिए घर के छोटे-बड़े बर्तन इस्तेमाल किये जाते हैं। आठ घंटे की दैनिक मजदूरी करके घर की जरूरतों को पूरा करने में परिवार के सभी युवा सदस्य जुटे रहते हैं। प्रातः काल उठकर घर के दैनिक कार्यों को निपटाकर महिला और पुरुष चाय श्रमिक नियत समय पर बागान पहुँच जाते हैं और काम में लग जाते हैं। दिनभर के कठिन परिश्रम के बाद शाम में जलावन की लकड़ी, राशन के साथ घर पहुँचकर इनमें और कुछ सोचने-समझने की क्षमता नहीं बचती है। अधिकतर श्रमिक घर पर बनी देशी शराब (चुलाई तथा हाड़िया) का सेवन कर परिश्रम की थकान को मिटाकर अगले दिन के लिए स्वयं को तैयार करते हैं। मादक द्रव्य के अत्यधिक सेवन के कारण इस समाज में आये दिन गाली-गलौज, घरेलू हिंसा की घटनाएँ जैसे आम बात हैं। इस तरह नित्य प्रति नशीले पदार्थों का सेवन करना इस समाज की आर्थिक और सामाजिक दशा के अत्यधिक विकृत होने का एक प्रमुख कारण है। दिनभर बागान में काम करने के कारण इस समाज की नयी पीढ़ी को माता-पिता का समय नहीं

मिल पाता है जिससे एक प्रगतिशील समाज और सकारात्मक परिवेश के निर्माण में बाधा पहुँचती है। किसी भी बच्चे के व्यक्तित्व के समग्र विकास में शिक्षा के साथ-साथ उपर्युक्त सभी चीजें सहायक होती हैं। किन्तु चाय श्रमिकों के बच्चे दिनभर धूल में खेलते, मार-पीट करते, एक-दूसरे को अपशब्द कहते दिखाई देते हैं। बागानों में प्राथमिक शिक्षा की सुविधा के बावजूद न तो ये बच्चे विद्यालय जाना चाहते हैं और न ही इन्हें देखने वाला ही कोई वहाँ मौजूद होता है।

दरअसल, चाय जनगोष्ठी के समाज की सबसे बड़ी और चुनौतीपूर्ण समस्या अशिक्षा ही है। इसके कारण चाय श्रमिकों की आर्थिक-सामाजिक प्रगति अवरुद्ध हुई है। चाय श्रमिक बागानों में काम करना अपनी नियति मान चुके थे। उनकी मानसिकता ऐसी हो चुकी थी कि शिक्षा प्राप्त करके भी उन्हें पीढ़ी-दर-पीढ़ी बागानों में ही श्रम करना है। चाय जनगोष्ठी के प्रसिद्ध साहित्यकार देउराम तासा जी इस संदर्भ में कहते हैं "एई समाजत संतान जन्म हुआ मात्रके प्रश्न करा हय, पात तोला ने कोर मारा बुलि"[4] अर्थात् इस समाज में शिशु के जन्म लेने के पश्चात् ही यह मान लिया जाता है कि लड़कियाँ बागानों में पत्ती तोड़ने का काम करेंगी और लड़के बागानों में छँटाई, जोताई आदि का काम करेंगे। अशिक्षा के कारण ही इस समाज में तंत्र-मंत्र, भूत-प्रेत, डायन आदि से संबंधित अंधविश्वास की अतिव्याप्ति है। मसलन नजर दोष, स्वप्न दोष, सर्दी-ज्वर, डायरिया आदि को ठीक करने के लिए मंत्रों का आज भी प्रचलन है। किन्तु चाय जनगोष्ठी में पहले के मुकाबले आज शिक्षा के प्रति आग्रह देखा जाता है। 'पढ़ा-सुना कानार लाठी' अर्थात् शिक्षा अंधे की लाठी है जैसे सकारात्मक भाव इस समाज को शिक्षा और प्रगति ओर अग्रसर करते हैं। हालाँकि उच्च शिक्षा में इनकी भागीदारी अभी भी कम है लेकिन बागान के विद्यालयों अथवा अन्य सरकारी व गैर-सरकारी विद्यालयों में चाय जनगोष्ठी के बच्चों के नामांकन में उतरोत्तर वृद्धि होने लगी है। यह बात अवश्य है कि साधारण चाय श्रमिकों के बनिस्पत प्राक्तन चाह मजदूरों (पूर्व चाय मजदूरों) में शिक्षा के प्रति अधिक सक्रियता है। शेष अधिकतर विद्यालय में प्रवेश के बाद भिन्न कारणों से अपनी पढ़ाई बीच में ही छोड़ देते हैं। विशेषकर लड़कियों की शिक्षा आज भी दोयम दर्जे पर ही है। आर्थिक तंगी से जूझते चाय श्रमिकों के परिवार की अधिकतर लड़कियाँ होश संभालने भर से दूसरों के घरों में साफ-सफाई तथा छोटे बच्चों के देख-रेख के लिए भेज दी जाती हैं। उसके बाद कुछ बागानों में श्रम करती हैं तो कुछ की शादी बहुत कम उम्र में हो जाती है। शारीरिक एवं मानसिक रूप से विवाह योग्य न होने के कारण इनके स्वास्थ्य पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। ये लड़कियाँ कम उम्र में ही गर्भवस्था को प्राप्त कर लेती हैं। यह भी देखा जाता है कि शिशु जन्म के दौरान असह्य पीड़ा से अथवा उचित देखभाल न मिलने के कारण

कुछ की मृत्यु भी हो जाती है। शिक्षा और उचित जानकारी के अभाव में चाय श्रमिकों में अधिक संतानें जन्म लेती हैं। जिसके कारण न तो उन्हें उचित परवरिश मिलती है और न ही अच्छा स्वास्थ्य। संतुलित भोजन के अभाव में अकुलाते बच्चे कुपोषण का शिकार हो जाते हैं जिससे उनका शारीरिक, मानसिक और बौद्धिक विकास ठीक तरह से नहीं हो पाता है। चाय श्रमिकों की बस्ती में स्वच्छ पेय जल, शौचालय, गंदे जल के बहाव हेतु उचित व्यवस्था न होने के कारण भी गंभीर और जानलेवा बीमारियाँ फैलती हैं। बागानों में भी शौचालय आदि का सही प्रबंध न होने के कारण विशेषकर महिला श्रमिकों को संक्रमण की समस्या हो जाती है। और, आगे चलकर अज्ञानता व अच्छी चिकित्सा के अभाव में समस्या गंभीर होती चली जाती है।

इस समाज की आतंरिक संरचना की बात की जाए तो चाय जनगोष्ठी के अंतर्गत कुल सौ से भी अधिक जातिगत समुदाय हैं। इनमें आदिवासी समुदायों के अतिरिक्त सामाजिक संरचना के अनुरूप विभिन्न राज्यों के ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र वर्ण के लोग भी मौजूद हैं। इस संदर्भ में देउराम तासा भी कहते हैं कि- "जनजातीय चाह मजदूर सकलर बाहिरेउ अ-जनजाति चाह-मजदूरसकलर माजत ब्राह्मण, क्षत्रिय, शूद्र, बैश्य- एइ चारिटा बर्गर लुकु जथेष्ट परिमाणे आमदानि होई आहिसे जदिउ बिशेषकोई एउँलुकोर माजत निम्न वर्णर हिंदूर संख्याइ सर्वाधिक बुलि क'ब पारि।"[5] इस समाज में आदिवासी समुदाय के अलावा निम्न वर्ण के हिंदुओं की संख्या अधिक है। अधिकतर उच्च वर्ण के लोग बागान के पेशे को छोड़ चुके हैं। इस संदर्भ में श्री गणेश चंद्र कुर्मी कहते हैं कि- "चाह बागिचात काम करिबलै पिछपरा जनजातीय श्रेणीर लगते अ-जनजातीय खेतियक आरु आनहे नेलागे बिहार, उत्तर प्रेदश, मध्यप्रदेश, उड़िष्या (उड़ीसा) आदि प्रांतर परा ब्राह्मण, कायस्थ, राजपूत, कुर्मि, कोइरी आदि जातिर लोको आहिसिल। अवश्ये सिबिलाक जातिसत्तार बेसिभाग मानुह चाह बागिचारपरा उलाई गोई एतियाउ प्राक्तन चाहमजदूर हिसापे असमते निगाजिकोई बसबास करि आसे।"[6] चाय बागानों में श्रमिक अथवा कर्मचारी के पद पर कार्य करते हुए भी अपने समाज में इन सभी जातियों के वर्ण के अनुरूप कार्य का विभाजन सहज दृष्टव्य है। पर्व-त्योहार अथवा संस्कारगत अनुष्ठानों में ब्राह्मण ही विधिवत पूजा-अर्चना करवाते हैं। इसी तरह कुम्हार मिट्टी के बर्तन बनाते हैं, ताँती- कपड़े की बुनाई करते हैं, रविदास- चमड़े से जूता बनाते हैं, मैरा- मिठाई बनाते हैं, हालधिया कंध- हल्दी की खेती करते हैं, ग्वाला- दूध का व्यापार करते हैं आदि। इस प्रकार चाय जनगोष्ठी के अंतर्गत आने वाली सभी जातियाँ सदियों से प्रचलित कर्म-विभाजन का अनुसरण करती हैं। इनके अतिरिक्त शेष भारत के भिन्न प्रांतों के आदिवासी लोग जनजाति की कोटि में आते हैं किन्तु असम में चाय श्रमिकों को अन्य पिछड़ा वर्ग के अंतर्गत बतौर चाय-बागान-श्रमिक (OBC-TGL)

की श्रेणी में रखा गया है। जबकि समूचे श्रमिक समुदाय की भिन्न जातियों को मूलस्थान पर उनकी जातीय अस्मिता के अनुकूल सामान्य, अन्य पिछड़ा वर्ग, अनुसूचित जाति व जनजाति का दर्जा प्राप्त है। बहरहाल, केंद्र और राज्य सरकार द्वारा असम की चाय जनगोष्ठी के सामाजिक उन्नयन तथा सामाजिक अधिकारों की सुरक्षा हेतु विभिन्न प्रावधान किये गये हैं तथा नियम पारित किये गये हैं। इनमें से कुछ प्रमुख नीतियाँ इस प्रकार हैं-

* *प्लांटेशन लेबर एक्ट:* सन् 1951 ई० में पारित इस अधिनियम में विशेषकर चाय श्रमिकों के आर्थिक और सामाजिक उन्नयन को ध्यान में रखते हुए चाय उद्योग-प्रबंधन को निर्देश दिए गए हैं। जिनमें प्रमुख हैं-
    - चाय श्रमिकों के परिवार को उचित आवास मुहैया कराना। चाय उद्योग द्वारा कच्चे अथवा पक्के मकान की सुविधा केवल स्थायी कर्मचारियों को ही मिलती है। कुछ बागानों द्वारा आम श्रमिकों को आवास की सुविधा न देकर किराया दिया जाता है।
    - बागानों के श्रमिकों को सपरिवार अच्छी चिकित्सा उपलब्ध कराने का प्रावधान है। असम के अधिकतर चाय बागानों में निजी अस्पताल हैं जिससे प्रत्येक श्रमिक परिवार को निःशुल्क चिकित्सा प्राप्त होती है।
    - चाय श्रमिकों की बस्ती में शुद्ध पेयजल की सुविधा देना अनिवार्य है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक घर में शौचालय और स्नान गृह का निर्माण कराना तथा उसके इस्तेमाल पर ज़ोर देना।
    - प्रत्येक लेबर लाइन में बिजली की सुविधा देना।
    - महिला श्रमिकों की कार्यावधि के दौरान दो से छह वर्ष के प्रत्येक शिशु के लिए क्रैच अर्थात् शिशु-गृह तथा उनके देखभाल हेतु किसी महिला की नियुक्ति करना।
    - प्रत्येक गर्भवती महिला श्रमिक को शिशु-जन्म के तीन महीने पूर्व से प्रसव के तीन महीने बाद तक पूरे वेतन के साथ प्रसूति अवकाश देने का प्रावधान है।
    - अत्यंत किफायती दरों पर चायपत्ती, चावल, आटा आदि राशन मुहैया करवाना अनिवार्य है।
    - बागानों में श्रमिकों के लिए कैंटीन की सुविधा देना, जिसमें कम कीमत पर चाय व लघु आहार प्राप्त हो सके।

- बागान अंचलों में शिक्षा के प्रसार हेतु विद्यालय की स्थापना करना अनिवार्य है। किन्तु इन विद्यालयों में प्राथमिक स्तर तक ही शिक्षा दी जाती है। वर्तमान समय में बागान के कुछ विद्यालयों को असम सरकार ने अपने अधीन लेकर उसे उच्चतर-माध्यमिक विद्यालयों अथवा मॉडल स्कूलों में परिवर्तित कर चाय जनगोष्ठी के शैक्षिक विकास हेतु तत्परता दिखायी है।
- चाय बागानों अथवा उद्योगों में कार्य हेतु आवश्यक संसाधनों को निःशुल्क उपलब्ध कराना। विभिन्न सुविधाएँ देकर श्रमिकों के अधिकारों को सुरक्षित करने का भी प्रयास किया गया है।

* *असम चाय श्रमिक कल्याण परिषद:* चाय मजदूर और प्राक्तन चाय मजदूरों की उन्नति हेतु सन् 1959 ई० में असम चाय श्रमिक कल्याण परिषद का गठन हुआ। इस परिषद ने श्रमिक-समाज में शिक्षा तथा कौशल विकास पर विशेष बल दिया। इसकी प्रमुख नीतियाँ दृष्टव्य हैं-

- इस समाज के विद्यार्थियों को शिक्षा हेतु आर्थिक सहायता प्रदान करना। विशेषकर मेडिकल तथा प्रौद्योगिकी के छात्रों को प्रति माह छात्रवृत्ति दी जाती है।
- प्रति वर्ष चाय जनगोष्ठी की लगभग चालीस शिक्षित युवा महिलाओं को नर्सिंग कोर्स का प्रशिक्षण देना।
- असम के विभिन्न अंचलों में चाय जनगोष्ठी समाज के विद्यार्थियों के लिए छात्रावास की विशेष व्यवस्था है।
- आईआईटी, बिजली विभाग आदि में प्रति वर्ष लगभग दस युवाओं को प्रशिक्षित कर उनमें कौशल का विकास कर उन्हें प्रोत्साहित किया जाता है, आदि।

चाय जनगोष्ठी की महिलाओं को शिक्षा के अलावा सिलाई-बुनाई के लिए प्रशिक्षण देकर उन्हें आत्मनिर्भर बनाने का प्रयास जारी है। आकाशवाणी के डिब्रूगढ़ और गुवाहाटी केंद्र से चाय जनगोष्ठी की कला, संस्कृति और साहित्य संबंधी साप्ताहिक प्रसारण इस समाज की विशिष्ट संस्कृति और साहित्य को संरक्षित करने के क्षेत्र में एक सकारात्मक कदम है। इसके अतिरिक्त सरकारी व्यय से लगभग सभी बागान अंचलों में कला तथा संस्कृति विकास केंद्र और 'करम मंच' (रंगमंच) स्थापित किये गये हैं। ग़ौरतलब है कि सन् 1992 ई० से समस्त बागान अंचलों की बस्तियों को ग्राम पंचायत विकास केंद्र के अंतर्गत शामिल कर दिया गया। इससे केंद्र व राज्य सरकार द्वारा ग्रामीण अंचलों के उन्नयन हेतु जो भी नीतियाँ और सुविधाएँ दी जाती हैं उनसे चाय श्रमिक भी कमोबेश लाभान्वित होने लगे हैं तथा उनके विकास की संभावनाएँ बढ़ने लगी हैं।

आर्थिक स्थिति:

चाय मजदूरों को असम में 'केंसा सोनर शिल्पी' अर्थात् चाय बागानों का वास्तविक शिल्पकार कहा जाता है। आज चाय बागानों की हरियाली से न केवल असम के प्राकृतिक सौंदर्य में श्रीवृद्धि हुई है बल्कि आर्थिक व्यवस्था में चाय उत्पादन की महती भूमिका है। किन्तु विश्व प्रसिद्ध असम के चाय के उत्पादन में तल्लीन रहने वाले चाय श्रमिकों और कर्मचारियों की आर्थिक दशा अत्यंत सोचनीय है। असम में चाय उत्पादन के इन दो सौ वर्षों के सफर में राज्य और केंद्र सरकार को करोड़ों-अरबों रुपये का मुनाफा हुआ है। किंतु इस मुनाफे के मूल में जिन लोगों का योगदान है उनकी अर्थ-संपत्ति झुग्गी-झोपड़ियों तक सीमित है। यह कहना गलत नहीं होगा कि स्वतंत्रता के बाद भारत अंग्रेजों से मुक्त हुआ परन्तु इन चाय श्रमिकों को शोषण से मुक्ति नहीं मिली। आजादी से पूर्व चाय श्रमिकों से बिल्कुल न्यूनतम सुविधाओं जैसे कच्चे घर, पेय जल और राशन के बदले में दिन-रात की मजदूरी करायी जाती थी। श्रम के एवज में किसी भी तरह की धन राशि नहीं दी जाती थी। विरोध करने पर अत्यंत क्रूरतापूर्ण तथा अमानवीय व्यवहार और प्रताड़ना से गुजरना पड़ता था। स्वतंत्रता प्राप्ति के तुरंत बाद सन् 1947 ई० में भारत सरकार ने बागानों से संबंधित विचार-विमर्श हेतु एक औद्योगिक समिति का गठन किया। इस समिति ने सर्वप्रथम अखिल भारतीय स्तर पर श्रमिकों के कार्य की अवधि को 48 घंटे प्रति सप्ताह निर्धारित किया। इसके अतिरिक्त इस समिति ने श्रमिकों से संबंधित अन्य कई सुझाव भी दिये जो आगे चलकर सन् 1951 ई० में *प्लांटेशन लेबर एक्ट (Plantation Labour Act)* के अंतर्गत पारित हुआ। इस अधिनियम में सन्निहित दिशा-निर्देशों के आधार पर श्रमिकों के आर्थिक सहयोग हेतु समय-समय पर अनेक योजनाएँ बनीं। सन् 1952 ई० में केंद्र सरकार ने 'कर्मचारी भविष्य निधि अधिनियम-1952' *(Employees Provident Fund Act, 1952)* के अंतर्गत 'कर्मचारी भविष्य निधि योजना-1952' *(Employees Provident Fund Scheme)* को संशोधित कर 'परिवार पेंशन सह जीवन बीमा योजना' *(Family Pension Cum Life Insurance Scheme)* के रूप में लागू किया। इस योजना के अंतर्गत भारत के विभिन्न उद्योग, कल-कारखानों के श्रमिकों के अलावा चाय श्रमिकों को भी शामिल किया गया। जिसके फलस्वरूप कार्य-अवधि के दौरान किसी भी श्रमिक की आकस्मिक मृत्यु होने पर एक हजार रुपये के अतिरिक्त चालीस रुपये प्रति माह पेंशन परिजनों को मुहैया कराने की व्यवस्था की गयी। आजादी से पूर्व कितने ही चाय श्रमिक शारीरिक और मानसिक यातना झेलते हुए काल कवलित हो गये जिसका कोई निश्चित आँकड़ा मौजूद नहीं है।

विदेश तथा भारत के भिन्न प्रांतों में चाय की बढ़ती माँग की आपूर्ति हेतु केंद्र सरकार ने सन् 1954 ई० में टी बोर्ड *(Tea Board of India)* का गठन किया। राज्य स्तरीय टी बोर्ड के कार्यालय की स्थापना कर चाय उद्योग तथा श्रमिकों से संबंधित सभी दिशा-निर्देशों के अनुपालन पर विशेष ध्यान दिया जाता है। चाय श्रमिकों की आर्थिक सुरक्षा हेतु असम सरकार के श्रमिक कल्याण विभाग द्वारा सन् 1955 ई० में असम चाय कर्मचारी भविष्य निधि अधिनियम *(The Assam Tea Plantations Provident Fund Scheme Act, 1955)* को लागू किया गया। 'इस अधिनियम के अंतर्गत चाय कर्मचारी जीवन बीमा योजना और चाय कर्मचारी पेंशन योजना का क्रियान्वयन हुआ।'[7] इस भविष्य निधि अधिनियम के कुछ प्रमुख निर्देश इस प्रकार हैं-

- चाय श्रमिकों को निजी जमीन पर आवास निर्माण हेतु ऋण देने का प्रावधान है।
- इस भविष्य निधि कोष में कुल श्रमिक उपार्जन का औसतन 24% जमा करना सुनिश्चित हुआ जिसमें श्रमिक और उद्योगपति 12-12 % की समान राशि संचित करेंगे।
- कार्य-अवधि के दौरान किसी भी श्रमिक की आकस्मिक मृत्यु होने पर जीवन बीमा योजना के तहत 30,000 रुपये मुआवज़े की राशि सुनिश्चित की गयी है। इसके अतिरिक्त 175/- प्रति माह की दर से सालाना 2100 रु. पेंशन राशि परिजनों को प्राप्त होगी।
- नाम काटा अर्थात् अवसर प्राप्ति अथवा स्वैच्छिक सेवानिवृति लेने पर प्रोविडेंट फण्ड पेंशन मुहैया करायी जाएगी।
- श्रम के दौरान आकस्मिक दुर्घटना से ग्रस्त होने पर क्षतिपूर्ति होगी। इसके अतिरिक्त श्रमिकों को माता-पिता के श्राद्ध अथवा बच्चों के विवाह हेतु ऋण देने का भी प्रावधान है।

ध्यातव्य है कि भविष्य निधि की जमा राशि समयावधि से पूर्व अप्रतिदेय है। असम सरकार द्वारा श्रमिकों की आर्थिक सुरक्षा को ध्यान में रखकर उठाया गया यह कदम एक सकारात्मक प्रयास अवश्य रहा लेकिन इससे चाय श्रमिक भरसक लाभान्वित नहीं हो पाये। कारण कि इन चाय श्रमिकों से संग्रहित राशि को निर्धारित समय के भीतर बैंक में जमा नहीं किया जाता है अथवा जमा राशि की रसीद/ चलान बोर्ड तक नहीं भेजी जाती है। इससे बोर्ड द्वारा चाय बागानों को डिफॉल्टर की सूची में शामिल कर दिया जाता है। इसीलिए परवर्ती समय में चाय बागानों को अन्य सुविधाओं से भी वंचित कर दिया जाता है। इतना ही नहीं चाय श्रमिकों के पास जमा

राशि का कोई व्यक्तिगत रसीद न होने के कारण भविष्य में वे अपनी ही जमा राशि को प्राप्त करने में अक्षम होते हैं। इसके अतिरिक्त चाय श्रमिकों की आर्थिक उन्नति हेतु कुछ अन्य प्रयासों व नियमों का उल्लेख इस प्रकार है-

* *चाय श्रमिक और प्राक्तन चाय श्रमिक कल्याण परिषद:* असम सरकार द्वारा गठित इस समिति ने कृषक-मजदूरों को निःशुल्क पावर टिलर उपलब्ध कराकर चाय के अतिरिक्त कृषि उत्पादन पर भी विशेष बल दिया। स्वयं सहायक ग्रुप (SHG) को कम दरों पर ऋण देकर नवीन व्यवसाय हेतु संभावनाओं को बढ़ावा दिया। बागान इलाकों में बिजली की कटौती जैसी दैनंदिन समस्या से निपटने के लिए विद्यार्थियों में मुफ्त सोलर लैंप का वितरण कर चाय श्रमिक समाज में शिक्षा के पथ को आलोकित करने का प्रयास किया गया।
* *ग्रैच्यूटी पेमेंट एक्ट, 1972:* इस नियमावली के अनुसार उद्योग अथवा बागानों के श्रमिकों को एक ही नियोक्ता के पास न्यूनतम पाँच वर्ष तक कार्य करना अनिवार्य है। सेवानिवृति के पश्चात् कुल कार्यकाल के प्रतिवर्ष पंद्रह दिन का वेतन ग्रैच्यूटी राशि के रूप में प्राप्त होती है। किन्तु ग्रैच्यूटी की अधिकतम राशि दस लाख रुपये तक निर्धारित है।
* *बोनस अधिनियम, 1965:* बोनस अधिनियम के अंतर्गत कर्मचारियों की बोनस राशि के निर्धारण संबंधी निर्देशों को शामिल किया गया है। इस अधिनियम के अनुसार प्रत्येक श्रमिक-उपार्जन का न्यूनतम 8.33% तथा अधिकतम 20% बोनस राशि की प्राप्ति निर्धारित है। इस अधिनियम को ध्यान में रखते हुए असम के चाय श्रमिकों को निम्न सुविधाएँ दी गयी हैं-

- कर्मचारियों के परिजनों को सालाना 228 घन फुट ईंधन की लकड़ी मुहैया कराने का प्रावधान है तथा प्रति दो वर्ष के अन्तराल पर प्रत्येक श्रमिक को एक कंबल, रैक्सीन कपड़ा, छाता आदि दिया जाता है।
- प्रत्येक कर्मचारी को बागानों अथवा फैक्ट्री में कार्य के दौरान प्रयुक्त औजारों तथा अन्य सामग्रियों जैसे- बरसाती, छाता, टोकरी, त्रिपाल, पेय जल आदि उपलब्ध कराना अनिवार्य है।
- चाय श्रमिकों को प्रति माह 600 ग्राम निःशुल्क चायपत्ती, राशन की सामग्री दी जाती है, आदि।

कुछ लोग सरकारी ऋण लेकर घर के आस-पास की खाली जमीन पर लघु स्तर पर चाय का उत्पादन करते हैं। इनमें खासकर प्राक्तन चाह मजदूर तथा अन्य समुदाय के लोग भी शामिल हैं। किंतु इससे साधारण चाय श्रमिकों की आर्थिक स्थिति में कोई विशेष परिवर्तन नहीं दिखाई देता है। इसका मुनाफा मध्यस्थ ले जाते हैं। अत्यंत कम कीमत में चाय की पत्तियाँ खरीदकर बड़ी कीमत वसूलकर उद्योगों में बिक्री करते हैं। बहरहाल, चाय श्रमिकों की आर्थिक स्थिति में सुधार हेतु राज्य और केंद्र सरकार ने विभिन्न योजनाओं व नियमों को लागू किया है। किन्तु आज भी इनकी वास्तविक दशा में सुधार की गुंजाइश शेष है। शिक्षा और जागरूकता की कमी के कारण चाय श्रमिक आज भी इन योजनाओं के तहत मिलने वाले अपने अधिकारों और इससे मिलने वाले लाभ से अनभिज्ञ रह जाते हैं। आज भी यह देखा जाता है कि चाय बागानों के श्रमिक निरक्षरता के कारण बैंक, डाकघर आदि की कार्य-प्रणाली को जानने, इसमें संचय करने से कतराते हैं। इसी कमी के कारण आज भी इनका आर्थिक शोषण अनवरत हो रहा है। इन चाय श्रमिकों की सुबह बागानों के बिगुल से होती है। उन्हें रोजमर्रा की भाग-दौड़ भरी ज़िन्दगी में हर वक़्त बस यही चिंता बनी रहती है कि बागान अथवा फैक्ट्री पहुँचने में नियत समय से क्षण भर मात्र देर होने पर इनकी दिहाड़ी में कटौती कर दी जाएगी। चाय जनगोष्ठी में प्रचलित गीत की इन पंक्तियों से श्रमिकों में काम के प्रति तत्परता और आर्थिक शोषण की सहज अनुभूति हो जाती है- "पाता तुला जेमोन-तेमोन/ कलम काटा बाड़ा रे दिगदारी/ ए मिनी कोईर देवा मोके ताड़ा-ताड़ी/ बिंगुल मारिलो चौकीदार डाकिलो/ काम जाते होबे मोके बाड़ा देरी।"[8] सन् 1993 ई० में असम सरकार ने साधारण श्रमिक *(ordinary unskilled)*, अर्द्ध कौशल *(semi-skilled)* तथा कौशलपूर्ण श्रमिकों *(skilled)* का दैनिक पारिश्रमिक क्रमशः तैंतीस रुपये, पैंतीस रुपये और अड़तीस रुपये निर्धारित किया। 'वर्तमान में ब्रह्मपुत्र घाटी के चाय श्रमिकों को 232 रुपये तथा बराक घाटी के श्रमिकों को 210 रुपये दैनिक मजदूरी दी जाती है।'[9] किसी भी काम को प्रतिदिन 8 घंटे करने के बाद यदि बढ़ती महँगाई के समय में भी पारिश्रमिक के रूप में यह तुच्छ राशि दी जाएगी तो यह कितना न्यायपूर्ण है इसका सहज अनुमान लगाया जा सकता है। जिस राज्य की आर्थिक अस्मिता चाय उत्पादन पर केन्द्रित है वहाँ के बागानों में श्रमरत कर्मचारी आज भी गरीबी सीमा रेखा से कहीं बहुत नीचे ही दबे हुए हैं। व्यावसायिक स्थिति यह है कि आज किसी भी दिहाड़ी मजदूर को कम से कम एक दिन में 350-400 रुपये तक पारिश्रमिक मिलता है और चाय श्रमिकों को लगभग इसके आधे से कुछ ही ज्यादा। इतना ही नहीं भारत के अन्य चाय उत्पादक राज्यों के श्रमिक वेतन से तुलना करने पर भी असम के चाय श्रमिकों की स्थिति कहीं से संतोषजनक नहीं है। चाय उद्योग मूलतः व्यक्तिगत व्यवसाय है। अतः इसका

प्रमुख उद्देश्य मुनाफा है। पूँजीवाद के पथ को प्रशस्त करने वाले चाय श्रमिक उत्पादक यंत्र की भूमिका अदा करते हैं। यह श्रमिक जीवन का कटु सत्य है।

राजनीतिक स्थिति:

आहोम राजा पूरंदर सिंह के शासनकाल में असम में चाय की खोज तथा इसके औद्योगिक सफर की शुरूआत हुई। उस समय ब्रिटिश अधिकारियों का पूरा ध्यान चाय के निर्यात से अधिकाधिक मुनाफा अर्जित करना था। सन् 1839 ई० में असम का पहला चाय उद्योग 'असम टी कंपनी' की स्थापना कर उसके दीवान के पद पर मणिराम देवान बरभंडार बरुआ को नियुक्त कर दिया गया। परन्तु 1857 के सिपाही विद्रोह में इनकी संदेहजनक भागीदारी और चाय श्रमिकों पर हो रहे अत्याचार, शारीरिक यातना के विरुद्ध आवाज उठाने के आरोप में इन्हें फाँसी दे दी गयी। इसके बाद पूरे असम में स्वाधीनता आंदोलन के अग्रणी सेनानियों में मणिराम देवान बरभंडार बरुआ का नाम लिया जाने लगा। चाय बागान के *ठिकदार* (ठेकेदार) *मधु कोच* के नेतृत्व में असम चाय कंपनी के लगभग दस हजार श्रमिकों तथा कर्मचारियों ने पहली बार हड़ताल करके अंग्रेजों के खिलाफ विद्रोह किया तथा उस समय चल रहे सिपाही विद्रोह में अपनी भागीदारी निभायी। इसके परिणामस्वरूप मधु कोच को सात वर्ष के कारादंड तथा कालापानी की सज़ा दी गयी। इस आंदोलन के शेष सक्रिय लोगों को लगभग एक से चार वर्ष का कारावास दिया गया। इस विद्रोह के बाद विभिन्न राज्यों के भिन्न जातिगत लोगों को चाय बागानों में श्रम हेतु असम लाने की ब्रिटिश कूटनीति पूरी तरह से असफल साबित हुई। इन श्रमिकों ने एकजुट होकर अंग्रेजी शासन की दमनपूर्ण नीति का पुरजोर विरोध प्रारंभ कर दिया। ब्रिटिशों के अत्याचार व उत्पीड़न से चाय श्रमिकों के मन में असम के प्रति क्षोभ प्रकट होने लगा। लोकगीतों में अभिव्यक्त श्रमिक-मन का क्षोभ और हताशा कुछ इस प्रकार ध्वनित होती है-

"चल सारदा चल बारदा
आसामे बड़ दुःख रे
रेले चढ़े देश जाबो
आर एखाने थाकबो ना।
चांदपूरे टिकट काटे
अग चले जाब शुवालंदे

साहाब श्यालादेर चाह बागान

आरु कदम राखब ना''[10]

उद्धृत गीत की पंक्तियों से आशय यह है कि ये श्रमिक जन चाह उद्योग की श्रम नीति, वंचना, शोषण, मार-पीट से इतने निराश हो चुके थे कि वे किसी भी कीमत पर असम छोड़कर पुनः अपनी धरती को लौट जाना चाहते थे। इसीलिए वे कहते हैं कि असम में बहुत दुःख है। किसी तरह रेलगाड़ी की टिकट लेकर स्वदेश लौट जायेंगे और पुनः इन चाय बागानों में कभी कदम नहीं रखेंगे। विडंबना यह हुई कि इन चाय श्रमिकों से छलपूर्वक कुछ शर्तों पर मंजूरी ले ली गयी। सन् 1859 ई० में इन्हीं शर्तों को *'Workmens Breach Contract Act'* का नाम देकर जबरन उसे लागू किया गया। इसमें उल्लिखित शर्तें चाय श्रमिकों के लिए शोषण की बेड़ियाँ थीं जिससे मुक्ति पाने के लिए ये संघर्षरत थे। इस कॉन्ट्रैक्ट एक्ट के तहत चाय श्रमिकों को नियत समयावधि के भीतर काम छोड़ने अथवा किसी तरह का ऋण लेने की अनुमति नहीं थी। प्रथम अवस्था में श्रमिकों के कार्य की अवधि 313 दिन निर्धारित की गयी थी किन्तु बाद में ब्रिटिश अधिकारियों ने उसे अपनी इच्छानुसार बढ़ाकर पाँच वर्ष कर दिया। इतना ही नहीं शर्त के अनुरूप काम न करने पर अथवा किसी व्यक्ति द्वारा विद्रोह या पलायन करने पर उसे कारावास में कठोर दंड भोगना पड़ता था। आगे चलकर सन् 1921 के असहयोग आंदोलन से चाय श्रमिकों को अंग्रेजों के विरूद्ध आंदोलन हेतु साहस और बल मिला। उस समय गाँधी जी ने असम आकर अंग्रेजों की दमन नीति का विरोध करने के साथ ही चाय श्रमिकों के अधिकार के लिए आवाज उठायी। भाँग, नील, अफ़ीम आदि नशीलें पदार्थों का पूर्णतः निषेध होने लगा। इससे असम की आम जनता में अद्भुत चेतना का संचार हुआ। समस्त असमवासियों के साथ ही चाय श्रमिकों ने आंदोलन और हड़ताल के जरिये असहयोग आंदोलन में प्रत्यक्ष भूमिका अदा की। असहयोग आंदोलन में चाय जनगोष्ठी की मालती मैम उर्फ़ मंगरी उराँव पहली महिला शहीद हैं। इनके अतिरिक्त असम की चाय जनगोष्ठी के अन्य वीर स्वतंत्रता सेनानियों में मंगल कुर्मी, दयाल पनिका, रामचरण गोवाला, गोपीनाथ मार्डी आदि का नाम स्मरण किया जाता है। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के मार्क्सवादी नेताओं के नेतृत्व में अखिल भारतीय स्तर पर *ट्रेड यूनियन* संगठन को गठित किया गया। इस संगठन के श्रमिक नेताओं की बागान के चाय श्रमिकों को संगठित और जागरूक करने में महत्वपूर्ण भूमिका थी। फलतः सन् 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन में असम के चाय श्रमिकों की भागीदारी और योगदान अविस्मरणीय है।

हम देखते हैं कि *ऑल इंडिया ट्रेड यूनियन काँग्रेस* के असम शाखा के अंतर्गत सन् 1937 ई० में *'शिलेट-कछार चाय श्रमिक यूनियन'* तथा ब्रह्मपुत्र घाटी के चाय बागानों में भी भिन्न श्रमिक यूनियन दलों का आविर्भाव हुआ। श्रमिक यूनियन के इन दलों ने आंदोलनों, भूख-हड़तालों के द्वारा श्रमिकों के शोषण का विरोध कर अपने अधिकारों की माँग की। भारत छोड़ो आंदोलन के बाद ईसाई मिशनरियों के प्रभावस्वरूप चाय जनगोष्ठी में सामुदायिक संगठनों का गठन होने लगा। जोरहाट के अध्यापक प्रभुदान मारिक चारुदान के नेतृत्व में सन् 1943 ई० में सर्वप्रथम *असम छोटानागपुरी सम्मलेन* नामक संस्था गठित हुई। आगे चलकर 1945 ई० में इसी संगठन को *'असम चाह श्रमिक संस्था' (ATLA)* नाम से प्रसिद्धि मिली। असम के डिब्रूगढ़, जोरहाट, लखीमपुर आदि जिले के मिशनरी छात्रवास में रह रहे छात्रों ने 27-28 दिसंबर सन् 1947 ई० में साइमन सिंह हर और संतोष कुमार तप्न के नेतृत्व में डिब्रूगढ़ में *असम छोटानागपुरी छात्र सम्मलेन* का आयोजन किया। परन्तु ईसाई मिशनरी से संबद्ध होने के कारण धार्मिक जड़ता उत्पन्न हुई और हिन्दू धर्म के विद्यार्थियों ने इसमें सहभागिता नहीं दिखायी। सन् 1954 ई० में दीनानाथ चौधरी और छत्रगोपाल कर्मकार के कुशल नेतृत्व में गोलाघाट में हिंदू धर्म के अनुयायी छात्रों ने *असम चाय श्रमिक छात्र संस्था* का गठन किया। इन दोनों ही छात्र संगठनों को सम्मिलित कर सन् 1958 ई० में तेजपुर में *'अखिल असम चाह बागीचा संप्रदाय छात्र संस्था' (AATGTSA)* का गठन हुआ। वर्तमान में यह संस्था *असम चाय जनजाति छात्र संस्था (ATTSA)* नाम से कार्यरत है। चाय जनगोष्ठी के मुंडा, संथाल, उराँव आदि आदिवासी समुदायों ने कोकराझार के गोसाईगाँव में संयुक्त रूप से एक संगठन को जन्म दिया। सन् 1959 में इस संस्था का *असम आदिवासी परिषद (ACA)* नाम से नामकरण हुआ।

स्वातंत्र्योत्तर भारत में आतंरिक राजनीति और पूँजीपतियों के वर्चस्व के कारण चाय श्रमिकों की आर्थिक-सामाजिक स्थिति में बहुत विशेष परिवर्तन नहीं हुआ। विदेशी शासन के अंत के बाद उनकी दमनकारी नीतियों के निर्वहन का भार उद्योगपतियों ने ले लिया। इसीलिए चाय श्रमिकों में सामाजिक अस्मिता, अधिकार और आर्थिक उन्नति के लिए निरंतर संगठनों का निर्माण होता रहा। आज़ादी के बाद ब्रह्मपुत्र घाटी में *असम चाह कर्मचारी संघ* तथा बराक घाटी में *द इंडियन टी एम्प्लोयीज यूनियन* का गठन हुआ जो विशेषकर चाय उद्योग के कर्मचारियों से संबद्ध था। वहीं अखिल असम स्तर पर चाय श्रमिकों के अधिकारों की सुरक्षा हेतु सन् 1958 ई० में *चाह मजदूर संघ* का गठन हुआ जिसका मुख्यालय डिब्रूगढ़ में है। यह संस्था लगातार चाय मजदूरों के अधिकारों और उनके सर्वांगीण विकास हेतु सरकार के समक्ष प्रतिनिधित्व कर रही है। भिन्न संस्थाओं,

सगठनों के अलावा चाय श्रमिकों के प्रतिनिधियों की उपस्थिति राज्य सरकार के मत्रिमंडल में भी रही है। असम में सन् 1952 के प्रथम चुनाव में गोलाघाट के सरुपथार से चानू खड़िया, तिनसुकिया के डुमडुमा समष्टि से मलिया ताँती, कोकराझार के गोसाईगाँव चुनाव क्षेत्र से मेथियास टुसु कांग्रेस दल के विधायक के रूप में निर्वाचित होकर समाज के उन्नयन में सहभागिता निभायी। इसी तरह पूरे असम के विभिन्न चुनावी क्षेत्रों से चाय जनगोष्ठी के नाना दलों और संगठनों के उम्मीदवार असम विधान सभा के सदस्य के रूप में मनोनीत हुए। भूतपूर्व मुख्यमंत्री श्री महेंद्र मोहन चौधरी के कार्यकाल में सर्वप्रथम चाय जनगोष्ठी के छत्र गोपाल कर्मकार ने राज्य सरकार के मंत्रिमंडल में पदभार ग्रहण किया। सन् 1972 ई० में मुख्यमंत्री श्री शरत चंद्र सिंह के नेतृत्व में मरियानी से चाय जनगोष्ठी के श्री गजेन ताँती को बतौर कैबिनेट मंत्री श्रम, खाद्य, परिवहन, व्यापार और वाणिज्य आदि विभागों की जिम्मेदारी सौंपी गयी। इस तरह असम के लोकसभा और विधान सभा के तमाम चुनावों में सांसद और विधायक के रूप में चाय जनगोष्ठी के बार्की प्रसाद तेलेंगा, दीपेन ताँती, रामेश्वर धनवार, जयचन्द्र नागवंशी, दिलेश्वर ताँती, दीनेश प्रसाद गोवाला, हरेन भूमिज, पृथिवी माँझी, जोसफ टोप्पो, सांसद पवन सिंह घटवार आदि राजनेताओं के नाम उल्लेखनीय हैं। वर्तमान समय में भी असम के लोकसभा और विधानसभा चुनाव में चाय जनगोष्ठी के प्रतिनिधि विधायक, सांसद, कैबिनेट मंत्री आदि पद पर आसीन होकर केंद्र और राज्य सरकार के तमाम मंत्रालयों में अपने कर्तव्य का निर्वहन कर रहे हैं।

ग़ौरतलब है कि असम में सन् 1978-79 में *अखिल 'असम छात्र संस्था'* के नेतृत्व में विदेशी बहिष्कार और जातीय अस्मिता रक्षा हेतु आंदोलन जारी था। उक्त संदर्भ में असम के तिनसुकिया और डिब्रूगढ़ जिले में चाय श्रमिक समाज के साथ संघर्ष की सृष्टि हुई। तदुपरांत *'चाह मजदूर जनजाति छात्र संस्था'* के सभापति श्री दीनेश्वर तासा और प्रधान सचिव बार्की प्रसाद तेलेंगा के नेतृत्व में 9 दिसंबर सन् 1979 में जोरहाट में *'अखिल असम छात्र संस्था'* के प्रतिनिधि सदस्यों के साथ संयुक्त रूप से आयोजित अधिवेशन में असम की चाय जनगोष्ठी को मूल निवासी/ स्वदेशी (असमिया भाषा में खिलंजिया अर्थात् Indigenous People) स्वीकार कर लिया गया। स्वाधीनता पूर्व से लेकर वर्तमान समय तक असम की राजनीति में चाय जनगोष्ठी की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। चाय श्रमिकों की आबादी असम के चुनावी दौर में निर्णायक का किरदार निभाते हैं। असम के चाय-उत्पादन बहुल इलाकों में प्रमुखतः तिनसुकिया, डिब्रूगढ़, शिवसागर, जोरहाट, गोलाघाट, शोणितपुर, कोकराझार, कछार आदि के समष्टिगत चुनाव क्षेत्रों में चाय जनगोष्ठी का मतदान बेशकीमती है। किसी भी उम्मीदवार या यूँ कहे तो चाय श्रमिक समाज के प्रत्याशित उम्मीदवार का विजयी होना सुनिश्चित होता है। किन्तु

इतनी भागीदारी, राजनीति के केंद्र में इनका प्रतिनिधित्व होने के बावजूद इस समाज की सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक स्थिति संतोषजनक नहीं है। आज भी यह समाज पिछड़ा और शोषित है।

कुलमिलाकर यह कहा जा सकता है कि चाय श्रमिकों में शिक्षा और जागरूकता की कमी के कारण इनकी सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक उन्नति अवरुद्ध है। सरकार द्वारा पारित नियमों और सुविधाओं से यह समाज काफी हद तक अनभिज्ञ रह जाता है। इससे इतर सरकारी दफ्तर के आला-अफसर भी इनकी अज्ञानता का यथोचित लाभ उठाकर इनका शोषण करते हैं। चाय जनगोष्ठी में अशिक्षित और अर्द्धशिक्षित वर्ग की संख्या अधिक है। अधिकतर विद्यार्थी हीनता-ग्रंथि के कारण तथाकथित मुख्य धारा के लोगों के सम्मुख असहज महसूस करते हैं। आज आवश्यकता है चाय जनगोष्ठी में जमीनी स्तर पर जागरूकता लाने की। उन्हें अपने अधिकारों, सुविधाओं के प्रति सचेत करने की। अन्य समाज के लोगों के साथ ही चाय जनगोष्ठी के शिक्षित वर्ग अपनी व्यक्तिगत उन्नति के साथ सामूहिक उन्नति पर बल देंगे तभी समूचा चाय श्रमिक वर्ग लाभान्वित और प्रगतिशील होगा। आज चाय बागानों के लिए सरकार द्वारा प्लांटेशन लेबर एक्ट 1951(PLA 1951), टी बोर्ड ऑफ इंडिया (TBI 1954) आदि जैसे अनेक नीति संबंधी आयोगों का गठन हो चुका है जिससे चाय बागानों के बाबू, सरदार, मैनेजर आदि बड़े तबके के लोगों का चाय श्रमिकों पर पूर्ण नियंत्रण समाप्त हो चुका है। शिक्षा के प्रचार-प्रसार, जागरूकता एवं सभी क्षेत्रों में सक्रिय भागीदारी ही इनके उत्तरोत्तर विकास में सहायक होगा।

संदर्भ सूची:

1. (सं.) सुशील कुर्मी, मेघराज कर्मकार रचनावली, पृष्ठ संख्या. 260
2. वही, पृष्ठ संख्या. 261
3. तथ्यदाता: श्री मकर सिंह भूमिज, लेसेंकार बंगाली गाँव, तिनसुकिया (दिनांक: 28.11.2022)
4. (सं.) गणेश चंद्र कुर्मी, देउराम तासा रचनावली, पृष्ठ संख्या. 552
5. वही, पृष्ठ संख्या. 555
6. (सं.) राजेन गोगोई, चाह जनगोष्ठीर चिंता-चेतना, पृष्ठ संख्या. 247
7. 10वाँ असम अधिनियम, 1955 अनुच्छेद 3.(I), लिंक: https://www.indiacode.nic.in (दिनांक: 19.01.2023, रात्रि-11.50 बजे)
8. https://youtu.be/BIUMfRHTt6k (दिनांक: 11.01.2023, रात्रि:10.00 बजे)
9. The Assam Tribune, पृष्ठ संख्या. 04 (दिनांक: 10.08.2022)
10. (सं.) राजेन गोगोई, चाह जनगोष्ठीर चिंता-चेतना, पृष्ठ संख्या. 244

3.3 चाय जनगोष्ठी की भाषा

भाषा मूलतः विचारों की अभिव्यक्ति तथा भावों के संप्रेषण हेतु व्यवहृत होती है। यह एक सामाजिक इकाई है जो किसी व्यक्ति विशेष द्वारा रचित अथवा संचालित नहीं होती वरन् समूची समष्टि इसका उपयोग करती है। डॉ० रामविलास शर्मा अपनी पुस्तक 'भाषा और समाज' में इस बात को स्पष्टतः कहते हैं- "किंतु भाषा व्यक्तिगत इकाई नहीं है। न किसी व्यक्ति ने अकेले भाषा रची है, न केवल अपने लिए वह भाषा का प्रयोग करता है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, यह सत्य सबसे ज्यादा स्पष्ट भाषा के क्षेत्र में दिखायी देता है।"[1] भाषा एक ऐसी मानसिक संकल्पना है जो किसी भी समाज के परस्पर समान भाषा-भाषी व्यक्ति को भावनात्मक रूप में जोड़ती है। भाषाई अस्मिता के बनिस्पत एक समुदाय के लोगों की आपसी संवेदना, एकता, भाईचारा और सांस्कृतिक चेतना का आधार और विस्तार होती है भाषा। भाषाई अस्मिता के कारण विभाजन की त्रासदी को भी नकारा नहीं जा सकता। विशेषकर भारत में भाषाई आधार पर कई राज्य विभाजित हुए हैं। बहरहाल, भारत के भिन्न प्रान्तों से लाये गए चाय मजदूरों ने भाषाई चेतना और संवेदनात्मक भावभूमि पर संगठित होकर अपनी अलग पहचान कायम की। चाय जनगोष्ठी एक ऐसा वृहत् समाज है जिनमें जाति-जनजाति, उपजाति के विषम होने के कारण इनकी समाज-व्यवस्था, जीवन-शैली, लोकविश्वास, परंपरा आदि भिन्न होने के साथ-साथ भाषा भी भिन्न है। दरअसल, भिन्न भाषाई पृष्ठभूमि के लोगों को असम लाकर चाय उद्योग से जोड़ने के पीछे अंग्रेजों का उद्देश्य मात्र यही था कि इन अशिक्षित श्रमिकों में आपस में संप्रेषण संभव न हो। ताकि ये संगठित होकर अंग्रेजों की दमन-शोषण की नीति का कभी विरोध नहीं कर पाएँ। यहाँ तक कि जीवन यापन के न्यूनतम मानदंडों की आपूर्ति हेतु आवाज उठाने में भी असफल रहें। किसी भी विरोध के लिए भाषा से अच्छा कोई शस्त्र नहीं है और बिना भाषाई संवाद के संगठित होना असंभव है। लेकिन तत्कालीन शासन व्यवस्था की यह भाषाई कूटनीति टिक नहीं पायी। हम देखते हैं कि चाय श्रमिकों ने आपसी संवाद हेतु भिन्न भाषाओं की शब्दावली से युक्त एक नवीन सम्मिश्रित भाषा को जन्म दिया। यह भाषाई सम्मिश्रण इनके भिन्न जातीय समन्वय को बखूबी रेखांकित करता है।

असम प्रवास के प्रारंभिक दौर में ये श्रमिक जन भाषाई अंतर्संबंध बनाने में उतने सक्षम नहीं थे। समय के साथ धीरे-धीरे इनमें आपसी समन्वय बढ़ा। चाय जनगोष्ठी में भोजपुरी, सादरी या सदरी, उड़िया, तमिल, तेलुगु, कन्नड़, मराठी, संथाली, कुड़माली , खड़िया, गोंडी, मुंडारी आदि भाषा समुदाय के लोग हैं। ये सभी

तत्कालीन बिहार, उत्तर प्रदेश, उड़ीसा, तमिलनाडु, आंध्रप्रदेश, महाराष्ट्र, छत्तीसगढ़, पश्चिम बंगाल आदि राज्यों के मूल निवासी हैं। असम में चाय जनगोष्ठी के भाषाई समाज की बात की जाए तो ऐसा देखा जाता है कि बागान इलाके के *लेबर लाइन* में जिस जाति अथवा जनजाति बहुल के लोग निवास करते हैं उस स्थान पर वही भाषा रूढ़ होने लगती है। अर्थात् अन्य जातीय समुदाय के लोग भी संप्रेषण हेतु उसी भाषा का प्रयोग करने लगते हैं। उदाहरण के तौर पर यदि किसी बागान के श्रमिक बस्ती में झारखंड से आये श्रमिक अधिक हैं तो वहाँ उनके साथ-साथ उड़िया, मुंडा, तेलुगु भाषी श्रमिक भी सादरी ही बोलने लगते हैं। इसी तरह उड़िया भाषी लोगों की अधिकता होने पर अन्य लोग उड़िया भाषा को संप्रेषण की भाषा के रूप में अपना लेते हैं। यह बात अवश्य है कि चाय जनगोष्ठी की परवर्ती पीढ़ियाँ भाषाई सह-संबंध बनाने में अधिक सफल रहीं। इस तरह चाय जनगोष्ठी में एक व्यक्ति अपनी मातृभाषा को परिजनों तथा अपनी जाति-गोष्ठी के लोगों के बीच में बोलता है। यानी चाय जनगोष्ठी में एक साथ भाषा-विस्थापन और भाषा-अनुरक्षण की स्थिति सहज ही देखने को मिलती है। इसके अलावा चाय श्रमिक समाज के अन्य समुदायों से संप्रेषण स्थापित करने हेतु सादरी अथवा उस समाज में अधिकाधिक बोली जाने वाली भाषा का उपयोग करते हैं। पठन-पाठन हेतु एवं चाय जनगोष्ठी से इतर समाज के लोगों के साथ ज्यादातर असमिया भाषा में ही बातचीत करते हैं। यह तो हुई बात ब्रह्मपुत्र घाटी के चाय श्रमिकों की। परंतु बराक घाटी के चाय श्रमिक अपनी मातृभाषा के अलावा बांग्ला तथा कमोबेश हिंदी का प्रयोग करते हैं। कुलमिलाकर चाय श्रमिक अपनी दिनचर्या में लगभग तीन से चार भाषाओं को बोलते हैं। इस आधार पर चाय श्रमिक समाज की भाषा के रूप में किसी एक भाषा को चिह्नित करना बेहद मुश्किल है। लेकिन इस समाज में यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि आम बोलचाल में अपनी मातृभाषा के अलावा चाय श्रमिकों में सादरी भाषा का प्रचलन है, जिसे इस समाज की प्रमुख lingua-franca अर्थात् संपर्क भाषा या संप्रेषण की भाषा कहा जा सकता है। इसी तर्ज पर भिन्न जातीय अस्मिताओं के सम्मिश्रण से निर्मित चाय जनगोष्ठी समाज की कॉमन भाषा के रूप में सादरी को स्थान दिया जा सकता है। समूची चाय जनगोष्ठी को भाषाई दृष्टि से समन्वित करने में सादरी भाषा एक महत्वपूर्ण कड़ी है।

चाय जनगोष्ठी में प्रचलित भाषाओं अथवा बोलियों को तीन प्रमुख भाषा परिवारों में विभक्त किया जा सकता है। यथा- ऑस्ट्रोएशियाटिक भाषा परिवार, द्रविड़ भाषा परिवार और आर्य भाषा परिवार। निम्न तालिका के आधार पर चाय जनगोष्ठी की प्रमुख भाषाओं का पारिवारिक वर्गीकरण स्पष्टतः दृष्टव्य है-

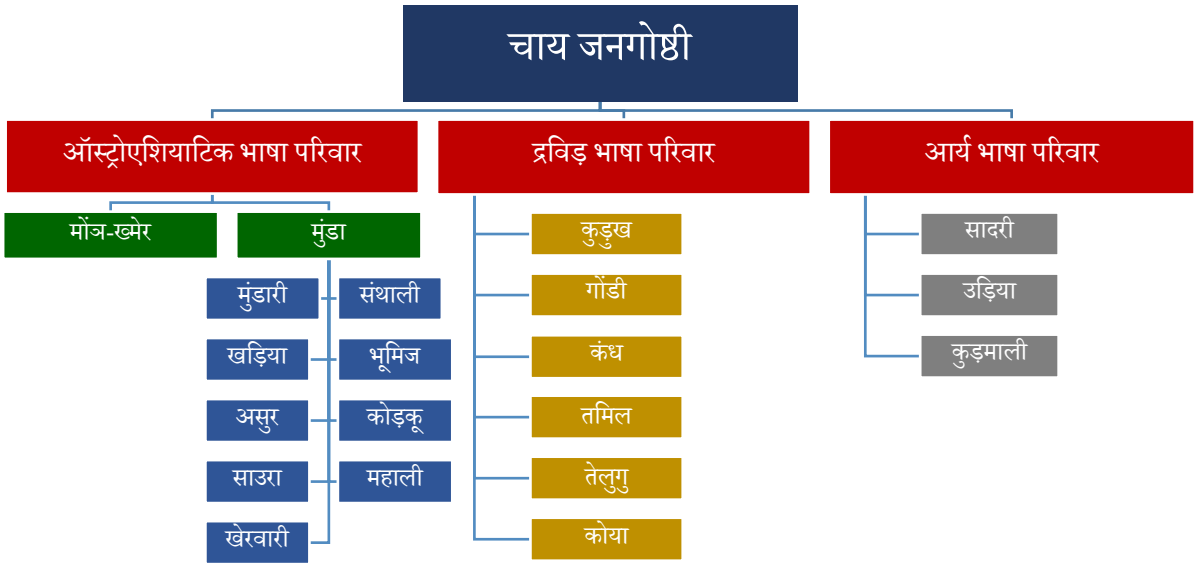

(चित्र संख्या 3.1: चाय जनगोष्ठी की प्रमुख भाषाओं का पारिवारिक वर्गीकरण)

तालिका में अंतर्निहित भाषाओं व बोलियों के अतिरिक्त कई ऐसी भाषाएँ हैं जिन्हें चाय श्रमिक मातृभाषा के तौर पर उपयोग करते हैं। खासकर पश्चिम बंगाल के पुरुलिया, मेदिनीपुर, बराभूम, बांकुड़ा आदि अंचलों से आये मजदूर बांग्ला भाषा का प्रयोग करते हैं। वहीं झारखंड, बिहार और उत्तर प्रदेश राज्यों के राँची, पलामू, गोरखपुर, हजारीबाग, सिंहभूम, दौलतगंज आदि अंचलों के मजदूरों में भोजपुरी, मैथिली, मगही आदि भाषाएँ प्रमुखतः बोली जाती हैं। नासिक में मराठी, दक्षिण के अंचलों में तमिल, तेलुगु, कन्नड़ आदि भाषाएँ; मध्यप्रदेश के रायपुर, जबलपुर, रामपुरहाट तथा उड़ीसा के डोमका, संबलपुर, कालाहांडी, गंजाम, मयूंरभंज आदि तथा छत्तीसगढ़ के बिलासपुर आदि राज्यों के मजदूरों में विभिन्न आदिवासी भाषाओं का प्रचलन है। परंतु संपूर्ण चाय जनगोष्ठी के सम्मिश्रित समाज में संप्रेषण हेतु सादरी भाषा का ही सर्वाधिक प्रचलन है। इसे चाय जनगोष्ठी की आंतर जनजातीय भाषा, संपर्क भाषा या बागानिया भाषा भी कह सकते हैं। ध्यातव्य है कि सादरी बिहार, झारखंड, छत्तीसगढ़ और उड़ीसा में भिन्न जातीय समुदायों के बीच संपर्क हेतु जन्मी एक पिजिन भाषा है। विशेषकर राँची के बाजारों में इस भाषा का अधिकाधिक प्रयोग देखा जाता है। इस भाषा में भिन्न प्रांतीय भाषाओं और बोलियों का पुट शामिल होने के कारण इसके विशुद्ध रूप को परिभाषित कर पाना असंभव है। यही कारण है कि असम के चाय बागानों में मौखिक रूप से प्रचलित सादरी भाषा झारखंड तथा अन्य प्रान्तों में बोली जाने वाली सादरी से भिन्न है। इसमें खड़िया, मुंडा, भूमिज, उराँव, कुड़ुख आदि भाषाओं के शब्द तो हैं ही (बराक घाटी) बांग्ला और (ब्रह्मपुत्र घाटी) असमिया भाषा की शब्द-संपदा भी इसमें समाहित

है। इसीलिए असम के चाय बागानों में प्रचलित सादरी भाषा के इस रूप को असम की सादरी अर्थात् असमिया सादरी कहना अधिक तर्कसंगत प्रतीत होता है। एक लंबे समय से इस भाषा का प्रयोग संप्रेषण हेतु हुआ है लेकिन चाय जनगोष्ठी के कुछ समुदाय इसे अपनी मातृभाषा के रूप में प्रयोग करते हैं। अतः पिजिन भाषा के रूप में जन्मी सादरी झारखंड, उड़ीसा, मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़, पश्चिम बंगाल आदि प्रांतों की तरह असम में भी एक तरह से क्रियोल भाषा के रूप में मान्य है। हालाँकि सादरी भाषा में अभी भी कार्यालयी कामकाज नहीं होता है और न ही यह शैक्षिक संस्थानों में पठन-पाठन की भाषा के रूप में प्रयुक्त होती है।

यद्यपि सादरी भाषा में ऑस्ट्रोएशियाटिक भाषा परिवार के अंतर्गत आने वाली भाषाओं के शब्द मौजूद हैं तथापि मूल रूप से भोजपुरी, मगही तथा कुछ-कुछ उड़िया भाषा के शब्दों की प्रचुरता के कारण इसे आर्य भाषा परिवार के अंतर्गत रखा गया है। जॉर्ज अब्राहम ग्रियर्सन अपनी पुस्तक 'भारत का भाषा सर्वेक्षण' *Linguistic Survey of India* के vol. 5 *Indo-Aryan Family (भारतीय आर्य भाषा परिवार)* के द्वितीय भाग में *बिहारी और उड़िया* भाषा का विश्लेषण करते हैं। इसी खंड में सादरी भाषा के संबंध में अपना मत रखते हुए कहते हैं कि ".....the whole of Ranchi district, the language of the settled Aryans is a corrupt form of Bhojpuri, which has undergone modifications, partly by the influence of the Magahi dialect which surrounds it on three sides and of Chhattisgarhi spoken in its west and partly owing to the influx of words into its vocabulary which belongs to the languages of the Non-Aryans population. The same language is spoken in the north and east of the Native state of Jashpur. (In the west of the state, the language is the form of Chhattisgarhi known as Sargujia, and in the south, Oriya.) It is generally known as Nagpuria (strictly transliterated 'Nagpuria'), or the language of Chota Nagpur poper...Thus, the corrupt form of Chhattisgarhi, which is spoken by the Semi-Aryanised Korwas who have abandoned their original Munda language, is known as 'Sadri Korwa', as compared with the true Korwa language, belonging to the Munda family, which is still spoken by their wilder brethren."[2] वे यह भी कहते हैं कि जब कोई आदिवासी समुदाय अपनी मातृभाषा को विस्थापित कर किसी अन्य आर्य भाषा को अपना लेता है तो उस संदर्भ में 'सादरी' शब्द का प्रयोग किया जाएगा। "The word 'Sadri' is used when an aboriginal tribe

abandons his own language and takes to an Aryan one"[3] सादरी भाषा के कई अन्य नाम भी प्रचलित हैं; जैसे- सदानी, सदरी, गँवारी, नागपुरी आदि। नागपुरी अथवा सादरी भाषा का प्रचलन विशेषकर सदान समुदाय में है। इन सदानों की जाति नाग है। इसीलिए सादरी भाषा के लिए सदानी/ सादरी अथवा नागपुरी नाम रूढ़ हो गया है। इस भाषा की लिपि देवनागरी है। परंतु असम में इसके लिए असमिया भाषा की लिपि विष्णुपुरिया का उपयोग किया जाता है। ग़ौरतलब है कि इस शोध कार्य के अंतर्गत असम के परिवेश तथा भाषाई संस्कृति को ध्यान में रखते हुए यहाँ के चाय बागानों में प्रचलित सादरी भाषा का अध्ययन किया जाएगा। भाषा अध्ययन के संदर्भ में डॉ० रामविलास शर्मा कहते हैं कि- "भाषा का अध्ययन उसकी ध्वनि-प्रकृति, भाव-प्रकृति और मूल शब्द भंडार को दृष्टि में रख कर करना चाहिए।"[4] अतः चाय जनगोष्ठी की प्रमुख संपर्क भाषा *सादरी* का अध्ययन और विश्लेषण इन्हीं तीन मूलभूत आधारों पर केंद्रित है-

* ***ध्वनि प्रकृति:*** ध्वनि प्रकृति के अंतर्गत किसी भी भाषा के ध्वनि-व्यवहार तथा ध्वनियों के उच्चारण की स्थिति के बारे में उल्लेख किया जाता है। संसार की सभी भाषाओं की ध्वनियों में कुछ न कुछ साम्य-वैषम्य की स्थिति अवश्य होती है। भाषाओं की ध्वनि प्रकृति के आधार पर भाषाई विशिष्टता को सूक्ष्मतम स्तर पर विश्लेषित किया जा सकता है। असम के चाय बागानों में भिन्न भाषाई समुदायों द्वारा संपर्क स्थापित करने हेतु प्रयुक्त सादरी में ध्वनियों के उच्चारण स्तर पर असमिया और बांग्ला के प्रभाव को सहज रूप में देखा जा सकता है। 'असम की सादरी भाषा में स्वर और व्यंजन वर्णों की संख्या को लेकर कई मत प्रचलित हैं परंतु आमतौर पर कुल स्वरों की संख्या आठ (अ, अ', आ, इ, उ, ए, ए', ओ) और व्यंजनों की संख्या सत्ताईस ही मान्य है।'[5] उच्चारण का स्थान, जिह्वा तथा मुख विवर की स्थिति के आधार पर स्वरों को कुछ इस प्रकार विभाजित किया जा सकता है:

स्वर वर्ण	***उच्चारण स्थान***	***जिह्वा की स्थिति***	***मुख विवर***
অ (অ) [ओ - उच्चारण]	निम्न मध्य	पश्च	अर्द्ध संवृत
অ' (অ') [ओ' - उच्चारण]	उच्च निम्न	पश्च	अर्द्ध संवृत
আ (আ)	निम्न	मध्य	विवृत
ই (इ)	उच्च	अग्र	संवृत

ঊ (उ)	उच्च	पश्च	संवृत
এ (ए)	उच्च मध्य	अग्र	अर्द्ध संवृत
এ' (ए')	उच्च निम्न	अग्र	अर्द्ध संवृत
ও (ओ) [उ - उच्चारण]	उच्च मध्य	पश्च	संवृत

(तालिका संख्या 3.2: असमिया सादरी के स्वर वर्णों की ध्वनि प्रकृति)

असमिया सादरी में कई स्थानों पर कंपित ध्वनि का मूर्धन्यीकरण हो जाता है। जैसे 'र' के स्थान पर 'ड़' का प्रयोग अधिक होना इसकी विशेषता है। जैसे: छोकड़ा (छोकरा), दौड़ (दौर), चाइड़ (चाइर/ चार), अकड़ा ('अकरा' अर्थ बेवकूफ), टोकड़ी (टोकरी) आदि। इसी प्रकार पार्श्विक ध्वनि कंपित ध्वनि के रूप में उच्चरित होती है। अर्थात् 'ल' के स्थान पर कहीं-कहीं 'र' का प्रयोग भी होता है। यथा- बादर (बादल), काजर (काजल), झोरा (झोला) आदि। यद्यपि असमिया भाषा में চ (च), ছ (छ) के लिए 'स' और স (स) के लिए 'स' तथा 'ह' का उच्चारण होता है। असमिया में हिंदी की 'च' और 'छ' ध्वनि का उच्चारण नहीं है लेकिन इस भाषा के प्रभाव के बावजूद असमिया सादरी में 'च', 'छ' और 'स' तीनों ही ध्वनियों का यथस्थान उच्चारण किया जाता है। सादरी भाषा के कुछ शब्दों में 'र' ध्वनि का लोप हो जाता है। यथा- निजन (निर्जन), सटिफिकेट (सर्टिफिकेट) आदि।

* ***भाव प्रकृति:*** किसी भी भाषा की भाव प्रकृति को समझने का आधार उस भाषा की व्याकरणिक-व्यवस्था, वाक्य-संरचना, रूप तत्व आदि का विश्लेषण है। इन्हीं आधारों पर किसी भी भाषा के भाव पक्ष को रेखांकित किया जा सकता है। बागानों में प्रचलित सादरी भाषा को वचन, पुरुष, कारक-विभक्ति, उपसर्ग-प्रत्यय, काल, क्रिया, सर्वनाम, शब्द-निर्माण, रूप तत्व और वाक्य-संरचना के स्तर पर विश्लेषित कर भाव प्रकृति को रेखांकित करने का प्रयास किया जाएगा।

वचन: हिंदी की ही तरह सादरी भाषा में भी वचन दो हैं। इसमें एकवचन के लिए विभिन्न शब्दों के साथ झन, ठो, गुछा, गुछि, के, गो, टा आदि प्रत्ययों को जोड़ा जाता है। उदाहरण- येकठो, येकझन, येकगुछा/ गुछि आदि (संख्यावाचक शब्दों में ठो, गुछा तथा झन प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है)। परंतु अधिकांशतः

शब्दों के साथ 'टा' प्रत्यय प्रयुक्त होता है। जैसे- आगुनटा, छकड़ीटा, झाड़ूटा, मानुसटा, एइटा आदि। इसी प्रकार बहुवचन के लिए शब्दों के अंत में गिला, गुला, झाक, रा, देर, सब, सबे आदि प्रत्यय लगाया जाता है। जैसे: मानुसगिला (मनुष्यों), छकड़ागिला (लड़के/लड़कों), बेमारगिला/ बेमारगुला (बीमारियाँ), पानीगिला/ पानीगुला (पानी), गरुझाक (गायें), पाखिझाक (चिड़ियाँ), फूलझपा (फूलों का गुच्छा), तरा (तुमलोग), अरा (वे लोग), हामदेर (हमारा), तदेर (उनका), इसब/एइसब (ये), उसब (वे), बाबूसबे (बाबूलोग) आदि।

पुरुष: 'सादरी में प्रथम, द्वितीय और तृतीय पुरुष सर्वनाम का प्रयोग होता है। इनका एकवचन और बहुवचन रूप इस प्रकार है'[6] –

पुरुष	एकवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	मोई/ हामि/ मोर (मैं/ मेरा)	हामे/ हामरा/ हमनि/ हामदेर (हम/ हमलोग/ हमारा)
द्वितीय पुरुष	तोंय/ तुई/ तोर/ रउरा (तुम/ तुम्हारा/ आप)	तोहनी/ तोरा/ तदेर (तुमलोग)
तृतीय पुरुष	उ/ इ/ उवार (वह/ यह/ उसका)	अरा/ उसब/ उमन/ इसब/ अदेर (वे/ ये/ उनका)

(तालिका संख्या 3.3: असमिया सादरी में सर्वनामों का प्रयोग)

लिंग: असमिया सादरी में लिंग परिवर्तन के लिए निम्नलिखित नियमों को अपनाया जाता है-

- ई, इन, न और आइन प्रत्यय जोड़कर असमिया सादरी में पुल्लिंग से स्त्रीलिंग शब्द बनाये जाते हैं। उदहारण- आकारांत पुल्लिंग शब्दों के अंत में 'ई' प्रत्यय लगाकर स्त्रीलिंग बनाया जाता है-काना-कानी, काका-काकी, मामा-मामी, बकड़ा-बकड़ी, छोकड़ा-छोकड़ी, सुंदर-सुंदरी आदि। इसी तरह अकारांत पुल्लिंग शब्दों के अंत में 'इन' प्रत्यय लगाकर स्त्रीलिंग बनाया जाता है-बाघ-बाघिन, नाग-नागिन, मास्टार-मास्टारिन, डाक्टार-डाक्टारिन, सरदार-सरदारिन आदि। इकारांत शब्दों में 'न' प्रत्यय को लगाकर स्त्रीलिंग बनाया जाता है- नाती-नातिन, सम्धि-सम्धिन (हिंदी में: समधी-समधिन) आदि। इसी तरह से 'आइन' प्रत्यय लगाकर भी स्त्रीलिंग बनाया जाता है- बाबू-बाबुआइन (हिंदी में: बबूआइन), ठाकुर-ठाक्राइन (हिंदी में: ठकुराइन), बाम्हन-बाम्हाइन, आदि। यद्यपि हिंदी और सादरी में कुछ शब्द एक जैसे प्रयुक्त होते हैं किन्तु उनकी वर्तनी अलग-अलग होती है।

- स्त्री-सूचक शब्दों को जोड़कर स्त्रीलिंग शब्द बनाये जाते हैं। इसके लिए मटा-माइकी, छाँड़ा-धाइड़ जैसे शब्दों का प्रयोग किया जाता है। उदाहरण- मटा छागल (बकरा)-माइकी छागल (बकरी), मटा हाँछ (हंस)-माइकी हाँछ (हंसिनी), मटा कुकुर (कुत्ता)-माइकी कुकुर (कुतिया), छाँड़ा मुर्गी (मुर्गा)-धाइड़ मुर्गी (मुर्गी) आदि।
- हिंदी की तरह असमिया सादरी में भी अनेक स्त्री सूचक शब्द स्वतंत्र रूप से प्रचलित हैं। जैसे: दीदी, माई, बहिन, साइस (सास), कनिया, दुलहिन, धाई आदि।

कारक: असमिया सादरी में कारक के छः भेद प्रयुक्त होते हैं। कर्ता, कर्म, करण, संबंध, अपादान और अधिकरण कारक। सम्प्रदान और संबोधन कारक इस भाषा में नहीं हैं। इसी तरह वाक्य में प्रयुक्ति हेतु विभक्तियों के मात्र चार रूप हैं; यथा- द्वितीया (के), तृतीया (से), षष्ठी (केर) और सप्तमी विभक्ति (में) जबकि हिंदी और असमिया में क्रमशः आठ और छः विभक्तियाँ हैं। बागानिया भाषा में आम बोलचाल के वाक्यों में कारक के अनुकूल विभक्ति चिह्नों का प्रयोग सहज ही देखा जा सकता है-

- *कर्ता कारक:* यह विभक्ति रहित कारक है। जैसे: 'बुधुवा घरे गेच्छे'(बुधुवा घर गया), 'मुनकी किताप पढ़ेहे/ पढ़ते आहे' (मुनकी किताब पढ़ रही है), 'मुनकी किताप पढ़लेक/ पढ़ते रहे' (मुनकी ने किताब पढ़ी) आदि।
- *कर्म कारक:* इसमें द्वितीया विभक्ति का कारक चिह्न 'के' प्रयुक्त होता है। जैसे: 'सुरेन हेमुके हाकाहे/ हाकाछे' (सुरेन हेमु को बुला रहा है), 'सोमारीके सब भाल पाएहे' (सोमारी को सभी प्रेम करते हैं) आदि।
- *करण कारक:* इसमें तृतीया विभक्ति का कारक चिह्न 'से' व्यवहृत होता है। जैसे: 'गाखीरसे घिउ हय' (दूध से घी बनता है), 'आँइखसे देखिल' (आँखों से देखा) आदि।
- *संबंध कारक:* इसमें षष्ठी विभक्ति का परसर्ग 'केर' प्रयुक्त होता है। जैसे: 'हेमंतीकेर घर बहुत सुंदर आहे' (हेमंती का घर बहुत सुंदर है), 'मंगलकेर बहिन बागान में पारमेट होलेहे'(मंगल की बहन चाय बागान में परमानेंट कर्मचारी हो गयी), 'घरकेर बात घरे रहोक' (घर की बात घर में रहे) आदि।

- *अपादान कारक:* यहाँ तृतीया विभक्ति का 'से' कारक चिह्न प्रयुक्त होता है। उदा०: 'गाछटा कुठारसे काट्ल' (पेड़ को कुल्हाड़ी से काटा गया), 'गाछसे पत्ता गिरलक' (पेड़ से पत्ता गिरा) आदि।
- *अधिकरण करक:* इसमें सप्तमी विभक्ति 'में' का प्रयोग होता है। उदा०: 'पोखरीमें माछ आहे' (तालाब में मछली है), 'छकड़ागिलामें पीरिति आहे' (लड़कों में प्रेम है) आदि।

काल: असमिया सादरी में वर्तमान काल, भूत और भविष्यत काल में क्रिया का बदलता हुआ स्वरूप कुछ इस प्रकार है-

- *वर्तमान काल :* 'मोई खाइल/ खाउन' (मैं खाता हूँ), 'श्याम आवेला' (श्याम आता है), 'मोई घर जात हों'(मैं घर जा रहा हूँ), 'तुई/ तोंय खाछिस'(तुम खा रहे हो), 'उमन भात खाहयं' (वे भात खा चुके हैं) आदि।
- *भूत काल :* 'मोंय खालो/ खालि' (मैंने खाया), 'तुई/ तोंय खाले'(तुमने खाया), 'उ/इ खालेक'(वह खाया), 'मोई खाइरहों' (मैंने खाया था), 'रमेन आवत रहें' (रमेन आ रहा था), 'छोकड़ागिला गेलयं' (लड़के गए) आदि।
- *भविष्य काल:* 'मोई खाबू/ खामू' (मैं खाऊँगा), 'तुई/ तोंय खाबे'(तुम खाओगे), 'उ/इ खाइ/ खाबेक'(वह खाएगा), 'मोई घर जाबयं' (मैं घर जाऊँगा), 'सिबू पढ़त रहि/ रहबंय'(सिबू पढ़ता रहेगा) आदि।

चाय जनगोष्ठी में प्रचलित सादरी भाषा में अविकारी/ अव्यय शब्दों में खातिर (लिए), ऐखातिर (इसीलिए), जेरकम-तेरकोम (जैसा-तैसा), अहेरकम (वैसे ही), तबेहले/ ताहले (तो फिर), तबेआर (तत्पश्चात), आउर (और), जइसन (जैसा) आदि शब्द प्रयुक्त होते हैं। इसके अतिरिक्त प्रश्नसूचक शब्दों में के/ कउन (कौन), का (क्या), काहे (क्यों), कबे (कब), केतना (कितना), काहाँ/ कनठिने (कहाँ); स्थानसूचक शब्दों में एइठिने (इधर), अइठिने (उधर), हियाँइ (यहाँ), हुँआइ (वहाँ) तथा समयसूचक शब्दों के अंतर्गत अखन/ अख्ने (अभी), जेखन/ जेख्ने (जब), तेखन/ तेख्ने/ सेखन/ तभे (तभी), कखन (कब) आदि का प्रयोग होता है।

यद्यपि सादरी भाषा में ऑस्ट्रोएशियाटिक, द्रविड़ तथा आर्य भाषा परिवार की विभिन्न भाषाओं के शब्द हैं परंतु इसकी वाक्य संरचना पर गौर किया जाए तो यह (कर्ता + कर्म + क्रिया) असमिया और हिंदी

जैसी आर्य भाषाओं की तरह है। उदाहरण के लिए 'हेमंती किताप पढ़ेहे' वाक्य में *हेमंती* कर्ता, *किताप* कर्म और *पढ़ेहे* क्रिया है। असम की सादरी की भाषागत विशिष्टता यह भी है कि यह प्रमुखतः ओकारबहुला/ ओकारांत एवं योगात्मक भाषा है। असमिया और बंगला के प्रभावस्वरूप इसकी प्रत्येक ध्वनि का उच्चारण ओकार युक्त होता है। जैसे- क्+ओ= को= क, ख्+ओ= खो=ख, ...आदि। इसी तरह कारक चिह्न शब्द के साथ जुड़ा होता है। यथा: 'महेशके चा-पानी दे' (महेश को चाय दो), रामूकेर घर ...' (रामू का घर) आदि। सादरी भाषा को वाक्य के स्तर पर अधिक स्पष्टत रूप में समझने के लिए रचना तथा अर्थ की दृष्टि से निम्न वाक्यों के उदाहरण देख सकते हैं-

रचना के आधार पर-

- *सरल वाक्य:* 'मोर नाम रूपा' (मेरा नाम रूपा है), 'बुधुवा आवत रहे' (बुधुवा आ रहा था)
- *संयुक्त वाक्य:* 'भालसे पढ़ आउर भाल मानुस बन' (ठीक से पढ़ो और अच्छे इंसान बनो), 'एइठिनसे जा नाइत उ देख ली' (यहाँ से जाओ अन्यथा वह देख लेगा)।
- *मिश्र वाक्य:* 'तोर बहिनकेर शादी होले हामरा इ बात गमेई नाइ पाइ रहि' (तुम्हारी बहन की शादी हो गयी इस बात की हमें सूचना ही नहीं मिली), 'मंगल बहुत पढ़त रहे लेकिन पास नाइ ह'लेक' (मंगल बहुत पढ़ता था लेकिन उत्तीर्ण नहीं हो सका)।

भाव अथवा अर्थ के आधार पर-

- *विधानसूचक:* 'सुरेन घर जाएला/ जाइल' (सुरेन घर जाता है।)
- *निषेधसूचक:* 'उ भात नाइ खाइछि' (वह भात नहीं खाया है।)
- *आज्ञासूचक:* 'तुई/ तोंय जा' (तुम जाओ।)
- *प्रश्नसूचक:* 'तोंय कनठिने जाहे/ जाच्छे?' (तुम कहाँ जा रहे हो?)
- *विस्मयसूचक:* 'छिः का कहिस!' (छिः क्या कह रही हो/ रहे हो!)
- *संदेहसूचक:* 'सिबू पढ़छे केजान' (सिबू शायद पढ़ रहा होगा।)
- *इच्छासूचक:* 'भगवान तर सब दुःख दूर करोक' (ईश्वर तुम्हारे सभी दुःख दूर करें।)

* ***मूल शब्द भंडार :*** वैसे तो कोई भी भाषा अन्य भाषाओं अथवा बोलियों के शब्दों को ग्रहण कर अधिक समृद्ध बनती है। परन्तु मूल शब्द संपदा किसी भी भाषा की विशिष्टता के कारक होते हैं। मूल शब्द भंडार के अंतर्गत किसी भी भाषा विशेष की रिश्ते-नाते की शब्दावली, सर्वनाम, प्रकृति के तत्व, कृषि, सामान्य जनजीवन से संबंधित शब्दावली आदि समाहित होती हैं। असमिया सादरी की मूल शब्द संपदा इस प्रकार है:

- *प्रकृति से संबंधित शब्दावली:*

सूरुज (सूर्य)	आमास (अमावस्या)	पिपड़ा (चींटी)	भेँड़ि (भेड़ा)
चान्द (चंद्रमा)	बाताच् (हवा)	माकड़ा (मकड़ी)	कुहलि (कोयल)
फजीर (प्रातः)	बादला (बादल)	घिर्गिट (छिपकली)	गिघ्नी (गिद्ध)
आलो (आलोक)	बाज (वज्रपात)	मुसा (चूहा)	कावा (कौवा)
कादा (कीचड़)	बरखन (बारिश)	नेहुल (नेवला)	सुगा (तोता)
आगुन (अग्नि)	सांज (संध्या)	काड़ा (मच्छर)	चिल (चील)
इंझर (रोशनी)	जोनपुकी (जुगनू)	गह्नि (सूअर)	चामचिका (चमगादड़)
गां (जलाशय)	तेलचाटि (तिलचट्टा)	घँड़ा (घोड़ा)	ढेंचु (उल्लू)
कूँवाछ (ओस)	पेंपला (तितली)	छागल (बकरी)	धइन्शा (धनेश)
जछना (चाँदनी)	जँक (जोंक)	चिड़ुवा (गिलहरी)	फूलफिछि (भौंरा)
शिकड़ (जड़)	डग् (कचनार पत्ती)	कँड़ी (कली)	दूबघाँस (दूब)
धतरा (धतूरा)	तुत्गाछ (शहतूत)	तेतुँल (इमली)	चिमल (शिमलू)
बकली (बगुला)	बादली (चमगादड़)	हांस (हंस)	संझाफूल (संध्यागुलाब)
चालुक (कुमुद)	पद्द (कमल)	पाइल्धा (मदार)	लालफूल (गुड़हल)
पिपड़ (पीपल)	चारा (पुआल)	बेन्जाति (मेहंदी)	खंदा (घोंसला) आदि।

(तालिका संख्या 3.4: चाय जनगोष्ठी में प्रचलित प्रकृति से संबंधित शब्दावली)

- *रिश्ते-नाते की शब्दावली:*

आजा (दादाजी)	जामाई (दामाद)	बुहारी (बहू)	भजी/ भौजी(भाभी)
आजी (दादीजी)	दादा (बड़ा भाई)	मितुर (मेहमान)	शारा (साला)
माई (माता)	दिदि (दीदी)	भेनेइ (जीजा)	शारी (साली)
बाप/बाबा (पिता)	पिसा/फुपा (फूफा)	भगना (भांजा)	सम्धि (समधी)
घैता (पति)	पिसी/फुपु (बुआ)	भागनी (भांजी)	सम्धिन (समधिन)
काका/बाढ़ा (चाचा)	पिला (संतान)	श्वशुर (ससुर)	छोकड़ा (लड़का)
काकी/बाढ़ी (चाची)	फुल (सखा)	श्वास (सास)	छोकड़ी(लड़की)
चाना-पुना (बच्चे)	फुलिन (सखी)	सतिन (सौतन)	छयेला (पुत्र)
जेठा (ताउ)	बौ (भाभी/नववधू)	धरम बेटा(पुत्र तुल्य)	छेछाइन (पुत्री)
जेठी (ताई)	बर (वर)	राँढ़ी (विधवा)	जानी (मातृ) आदि।

(तालिका संख्या 3.5: चाय जनगोष्ठी में प्रचलित रिश्ते-नाते की शब्दावली)

- *खाद्यान्न से संबंधित शब्दावली:*

काँठाल (कटहल)	बेग्ना (बैंगन)	भेँड़ि झिंगा (भिंडी)	तीयन (सब्जी)
मादाल (श्रीफल)	बिलाती (टमाटर)	हाड़िया (मटके में बना मद्य)	आँकुर (अंकुर)
आँउला(आँवला)	परल(तोरई)	शुक्टि/ शुट्कि(सूखी मछली)	कारला(करेला)
मधुफल(पपीता)	डिला/कुम्ड़ा(कद्दू)	कलोया(सुबह का नाश्ता)	कुन्द्री(कुंदली)
टेमरच्(अमरूद)	टिहुँ (खीरा)	बियारि (शाम का नाश्ता)	कुँइहाँ(ईख)
जनार(मकई)	झइल्का(मिर्ची)	पखाल (भात)	आलना (फीका)
राहेड़ (अरहर)	झिंगा (झिका)	तिका काहिलि (बिड़ी)	कामरांगा(कमरख)
सइरसा(सरसों)	हर्तकी/हरै (हर्रे)	कलडिल(केले का फूल)	आंदा(अंडा) आदि।

(तालिका संख्या 3.6: चाय जनगोष्ठी में प्रचलित खाद्यान्न की शब्दावली)

- *सांस्कृतिक शब्दावली:*

छँड़ा(गोबर-पानी छिड़कना)	मेड़ (मिट्टी की मूर्ति)	मानत (मनौती)	साध्नी (साधना)
माड़ाली (गोबर से की गयी लिपाई)	करमती (करम पर्व में व्रत करने वाली लड़कियाँ)	सटिया/ झुपान (शरीर पर देव आगमन)	झुमरिया(झुमुर नर्तकी)
भग छड़ा (भोग लगाना)	लग्दीन् (विवाह में दूल्हे को पकड़ने की विशेष रीति)	गामी (श्राद्ध)	मुहुरि(काली)
तामकि (वाद्य)	मादल (ढोल)	खेमटा (नृत्य)	डमकच (नृत्य)
छट्ठी/छटी (नवजात शिशु के जन्म के छठे दिन आयोजित संस्कार)	फूलशादी (पहली बार रजस्वला होने पर किया जाने वाला संस्कार)	माझि/कुड़ान/ हजा/बया (समाज का मुखिया)	करिया (पुरुष का वस्त्र: धोती)
किलि (गोत्र)	गतिया(मेहमान)	नाइके (पुरोहित)	खदा (गोदना/ टैटू)
टांगिया/फार्सा(परशुराम की कुल्हाड़ी)	पाघरा (पुरुषों के लिए कर्णाभूषण)	शिकरि (गले की चेन)	कनौसि/ कान्चि(कर्णाभूषण)
पंगला (माला)	टिकलि(बिंदी)	पंयरी (पायल)	हाँसुलि (हंसुली)
टुपा/खँसल(छोटी टोकरी)	धुकनी (पंखा)	मेसला(मेज)	हाँड़ि (कलश)
दाउ/दाउलि (लोहे का दाव)	गागरा (गगरी)	चियाँड़ी (तीर)	किरिछ(तलवार)
सुनुबाटि (कटोरी)	लुगा (कपड़ा)	कटारी(छूरी)	कड़ (कुदाल)
काठी नाच (विशेष नृत्य)	गाँठरि (गठरी)	चाटु (कड़छी)	चिराक (ढिबरी)
झुमुर (जातीय नृत्य)	सइलता (बाती)	पिँड़ा (पीढ़ा)	भिजा (भीगा)
नागरा (नगाड़ा)	घुंगुर (घुंघरू)	निसान (नगाड़े जैसा वाद्य) इत्यादि।	

(तालिका संख्या 3.7: चाय जनगोष्ठी में प्रचलित सांस्कृतिक शब्दावली)

- *रंग और संख्या की शब्दावली:*

कुला/काला (काला)	बगा (सफेद)	पातरंग/घासरंग(हरा)	आकाशी(आसमानी)
हल्धीया(पीला)	नील (नीला)	कमला (नारंगी)	गुलापी(गुलाबी)
लाल(लाल)	एक	दुइ (दो)	तिन (तीन)
चाइर (चार)	पाँच	छय (छह)	सात
आठ	आठ	नय (नौ)	दस् (दस)
एघार (ग्यारह)	कुरी (बीस)	उनचलिस(उनतालीस)	चलिस(चालीस)
उनपंचास(उनचास)	पंचास(पचास)	उनसाठी(उनसठ)	साठी (साठ)
उनसत्तर(उनहत्तर)	सत्तर	उनआखी (उन्यासी)	आखी (अस्सी)
निरानब्बइ(निन्यानवे)	नब्बइ (नब्बे) .....।		

(तालिका संख्या 3.8: चाय जनगोष्ठी में प्रचलित रंगों और संख्याओं की शब्दावली)

जैसा कि पहले ही उल्लेख किया जा चुका है कि चाय जनगोष्ठी में सादरी के अतिरिक्त अन्य भाषाएँ भी बोली जाती हैं। ये भाषाएँ किसी न किसी जाति अथवा आदिवासी समुदाय की मातृभाषा होती हैं। इनमें से कुछ प्रमुख भाषाओं का परिचयात्मक विवरण एवं उनकी भाषिक विशेषताएँ इस प्रकार है-

* *कुड़माली:* यह भाषा प्रमुख रूप से झारखंड में और कमोबेश पश्चिम बंगाल, बिहार तथा उड़ीसा राज्य के सीमावर्ती क्षेत्रों में बोली जाती है। यह चाय जनगोष्ठी के कुर्मी, महतो आदि समुदाय की भाषा है। कुड़माली मुख्य रूप से बांग्ला और उड़िया भाषा से प्रभावित एक आर्य भाषा है। इसे 'पंचपरगनिया' अर्थात् पाँच परगनों की भाषा कहा जाता है। कुड़माली भाषा के कुछ वाक्य देख सकते हैं: तोंय केमन आहिस? (तुम कैसे हो?), उ जाच्छे (वह जा रहा हैं) आदि।
* *उड़िया:* उड़िया भाषा में उराँव, कुई अथवा कंध, तेलुगु आदि द्रविड़ भाषा परिवार के शब्दों के साथ ही संथाली, मुंडारी (कोल-मुंडा परिवार), बांग्ला, असमिया, मैथिली आदि आर्य भाषा परिवार की भाषाओं के शब्द शामिल हैं। किन्तु इसे भारतीय आर्य भाषा परिवार में ही शामिल किया गया है। चाय जनगोष्ठी में ताँती, महानंद, दीप, बाघ, नाग, माखा, पातर, नायक आदि समुदाय के लोगों में उड़िया भाषा में संप्रेषण होता है। उदा० : तुई काँहि जिबो (तुम कहा जा रहे हो?), ए के लागे? (यह कौन है?) आदि।

* *मुंडारी:* भारत के बिहार, झारखंड, मध्यप्रदेश, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल, त्रिपुरा, असम आदि राज्यों में आदिवासी मुंडा समुदाय के लोग रहते हैं। असम में इनका वासस्थान कोकराझार, नलबाड़ी, दरंग, शोणितपुर, तिनसुकिया, डिब्रूगढ़, शिवसागर, जोरहाट, गोलाघाट आदि जिले हैं। इस आदिम समुदाय की भाषा ही मुंडारी है जो कोल-मुंडा (ऑस्ट्रोएशियाटिक) परिवार की प्रमुख भाषा है। इस समुदाय में लगभग सौ से भी अधिक गोत्र के लोग हैं जिनमें इंदुवार, हरः, हाँसदा, हेमरम, मूरा, चांगा, लांग, डूमडूम आदि प्रमुख हैं। इन आदिवासी समाजों की भाषा जितनी विशिष्ट है साहित्य भी उतना ही समृद्ध है। मुंडारी भाषा के कुछ शब्द और वाक्य उदाहरणस्वरूप यहाँ प्रस्तुत हैं- हर (मनुष्य), सेटा (कुत्ता), मेरम (बकरी), मियेत् (एक), बारिये (दो), आइंग मांडी जमकेदाइंग (मैंने भात खा लिया), नि अक्कय (यह कौन है?) आदि।
* *संथाली:* संथाली अथवा संथाल भाषी लोग खेड़वार समुदाय के अंतर्गत आते हैं। असम के तिनसुकिया, डिब्रूगढ़, शिवसागर, जोरहाट, गोलाघाट, कार्बी आंग्लांग, नगाँव आदि जिलों में रहने वाले चाय जनगोष्ठी के लोग संताली/संथाली भाषा का मातृभाषा के रूप में उपयोग करते हैं। हासंदा, मुर्मू, किरकू, सोरेन, टुडू, हेंब्रोम, बास्के, बेसरा, चोणे, बेडेया, पाउरिया आदि संथालों के उपनाम हैं। कोल-मुंडा परिवार में संथाली भाषी लोगों की संख्या ही अधिक है। संथाल समाज में संथाली भाषा के लिए 'हड़ रड़' शब्द का प्रयोग किया जाता है। इसके लेखन हेतु 'अलचिकी' लिपि का प्रयोग होता है। संथाली भाषा के कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं- अल (लिखना), मेरम (बकरी), दांगरी (गाय), हाकू (मछली), इंग दाका जम्किदिंग (मैंने भात खा लिया), नुई अक्कय (यह कौन है?) आदि।
* *भूमिज:* झारखंड, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल के मूल आदिवासी भूमिज समुदाय द्वारा बोली जाने वाली भाषा भूमिज है। यह हो, संथाली, मुंडारी आदि भाषाओं की भाँति ही मुंडा शाखा की एक प्रमुख भाषा है। भूमिज भाषा के लिए 'ओल ओनोल लिपि' प्रयुक्त होती है। वैसे असम में भूमिज भाषा के लिए असमिया की विष्णुपुरिया लिपि का भी प्रयोग देखा जाता है। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं- सामा (शून्य), मज् (एक), बार (दो), आपेज् (तीन), काका (चाचा), नाला (वेतन), इलि (हांड़िया), दिरि (पत्थर), आबु हातु मारांग गेया (हमारा गाँव बड़ा है), आम दो ओकोय? (तुम कौन हो?) आदि।
* *खड़िया:* चाय जनगोष्ठी का खड़िया भाषी समुदाय वास्तव में उड़ीसा के पहाड़ी क्षेत्रों तथा छोटानागपुर, मानभूम आदि क्षेत्रों से आव्रजित है। असम के तिनसुकिया और डिब्रूगढ़ जिले में ये आदिवासी जन

वास करते हैं। चाय जनगोष्ठी में इनकी जनसंख्या बहुत अधिक नहीं है। वैसे तो इस आदिवासी समुदाय में कई उपजातीय समूह हैं जैसे- मुंडा खड़िया, कोल खड़िया, एरेंगा खड़िया आदि किन्तु ये आदिवासी जन आपस में खड़िया भाषा के अतिरिक्त सादरी भाषा का भी प्रयोग करते हैं। खड़िया भाषा ऑस्ट्रोएशियाटिक भाषा परिवार की मुंडा शाखा की एक प्रमुख भाषा है। इस भाषा के कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं- अरइ (गाय), चितु (कुत्ता), आय (माँ), दक (बैठो), आति सोनापे (तुम कहाँ जा रहे हो?), आति चलचि ख (तुम कहाँ गये थे) आदि।

* *गोंडी:* मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़, आंध्रप्रदेश, महाराष्ट्र आदि राज्यों से असम आये गोंड आदिवासी समुदाय की मातृभाषा गोंडी है। यह मध्य द्रविड़ भाषा परिवार की एक प्रमुख भाषा है। गोंडी समुदाय के लोग असम में विशेष रूप से शिवसागर और गोलाघाट में बसे हुए हैं। गोंडी के कुछ शब्द और वाक्य इस प्रकार हैं- कफ् (आँख), मोसर् (नाक), बाधियाल् (गाय), हिक्के वार् (इधर आओ), गीता उंदी पाट वार्ता (गीता ने गीत गाया) आदि।
* *कंध:* यह उड़ीसा प्रान्त के पहाड़ी इलाकों में रहने वाली कंध जनजाति की प्रथम भाषा है। इसके लिए कुई, कांडा, खोंड आदि नाम भी प्रचलित हैं। कंध एक दक्षिण-पूर्वी द्रविड़ भाषा है। इस भषा के कुछ उदाहरण हैं- कडि (गाय), चिरु (पानी), उहुंगा (मछली), मिदाका देगी देगी सासेरु (बच्चे भाग गए), इयाजू इम्बाई (यह कौन है?) आदि।
* *तेलुगु:* तेलुगु अथवा तेलेंगा समुदाय के लोग प्रमुख रूप से आंध्रप्रदेश और तेलंगाना राज्य के निवासी हैं तथा कमोबेश कर्नाटक, तमिलनाडु, उड़ीसा, महाराष्ट्र, छत्तीसगढ़, पॉन्डिचेरी, केरल आदि राज्यों में रहते हैं। वर्तमान असम के तिनसुकिया, जोरहाट, शिवसागर, शोणितपुर जिले में इस भाषा के बोलने वाले चाय श्रमिक अथवा प्राक्तन चाय श्रमिक के रूप रह रहे हैं। तेलुगु द्रविड़ भाषा परिवार की एक प्रमुख भाषा है। इस भाषा के कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं- बाक्का (गाय), एक्क (बंदर), क'ड़ि (मुर्गा), नि-लू (पानी), अन्ना (भैया), इ दि एम टि (यह क्या है?), इला उन्नारु (तुम कैसे हो?) नेनू थिन्नारु (मैंने खाना खा लिया) आदि।
* *कुड़ुख:* बिहार, झारखंड, पश्चिम बंगाल, मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़ में निवास करने वाले उराँव संप्रदाय के लोगों में कुड़ुख भाषा का प्रचलन है। द्रविड़ भाषा परिवार की इस भाषा को उराँव भाषा भी कहते हैं। इस भाषा में तमिल और कन्नड़ भाषा की शब्दावली के भी पुट मौजूद हैं। उराँव भाषी चाय श्रमिक

असम के डिब्रूगढ़, शिवसागर, दरंग आदि जिले के रहने वाले हैं। उराँव भाषी लोगों में मिंज, एक्का, तिर्की, केरकेटा, लाखरा, कावा आदि गोत्र के लोग हैं। इस भाषा के कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं- इंज (मछली), बेर्खा (बिल्ली), खेंच (लाल), खेछ् (धान), एन मांडि अंदकांद (मैंने खाना खा लिया), एन्द्रा मांजा (क्या हुआ?) अज्जाम दाउ (बहुत खूब) आदि।

* *कोया:* कोया भाषा कोया जनजाति की मातृभाषा है। यह आंध्रप्रदेश, तेलंगाना, छत्तीसगढ़ आदि राज्यों से आव्रजित जनजाति है। असम में तिनसुकिया, डिब्रूगढ़, शिवसागर, जोरहाट जिले में इस जनजाति के लोग बसे हुए हैं। कोया भाषा में तेलुगु तथा गोंड भाषा की शब्दावली का मिश्रण देखा जाता है। यह मध्य द्रविड़ भाषा परिवार की गोंडी-कुई/कंध शाखा की भाषा है। इस भाषा के कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं- एँर् (पानी), काई (हाथ), पाल (दाँत), नान्ना द'दा निंतान (मैंने खाना खा लिया), इगाई माट्टा (यह क्या है?) आदि।
* *साउरा:* साउरा मुंडा शाखा की एक प्रमुख आदिम भाषा है जो साउरा जनजाति द्वारा बोली जाती है। साउरा भाषी लोग असम के डिब्रूगढ़, शिवसागर, लखीमपुर में निवास करते हैं। इस भाषा के कुछ सामान्य उदाहरण हैं- दा-आ (पानी), कुरु (भात), टांगलिइ (गाय), इटिन क्नि (यह क्या है?) आदि।

इन सभी भाषाओं के अतिरिक्त आर्य भाषा परिवार की असमिया, बांग्ला, मैथिली, भोजपुरी, दक्षिण भाषा परिवार की तमिल, परजा आदि अनेक भाषाएँ हैं जिनका असम की चाय जनगोष्ठी के भिन्न आदिवासी अथवा जातीय समुदाय के लोग अपनी मातृभाषा या संपर्क भाषा के रूप में व्यवहार करते हैं। कुलमिलाकर हम यह कह सकते हैं कि चाय जनगोष्ठी से संबद्ध हर व्यक्ति प्रायः बहुभाषी होता है। इस समुदाय के लोग एक साथ कई भाषाओं को बोलने एवं समझने की क्षमता रखते हैं। इस दौरान वे अपनी मातृभाषाओं का पारिवारिक स्तर पर प्रयोग करके या अपने समुदाय के समभाषियों के साथ उसका व्यवहार करके, अपनी मातृभाषा का संरक्षण करते हैं, उसका अनुरक्षण करते हैं साथ ही कुछ लोग दूसरी प्रभुत्वशाली भाषा को अपनाकर अपनी मातृभाषा का विस्थापन भी कर देते हैं। असम में चाय जनगोष्ठी की भाषा मुख्यतः सादरी के रूप में विख्यात है, जो उपर्युक्त कई भाषाओं के सम्मिश्रण से निर्मित है। इसमें विभिन्न भाषाओं की शब्दावलियों एवं भाषिक प्रवृत्तियों का समावेश है। आरंभ में इसकी स्थिति पिजिन भाषा के रूप में थी किन्तु वर्तमान में इसने काफी हद तक क्रियोल का रूप धारण कर लिया है।

संदर्भ सूची-

1. रामविलास शर्मा, भाषा और समाज, पृष्ठ संख्या. 408
2. George Abraham Grierson, Linguistic Survey of India, Page no. 277
3. वही, vol.5, part 2, Page no. 159
4. रामविलास शर्मा, भाषा और समाज, पृष्ट संख्या. 12
5. (सं.) नकुल कुर्मी तथा अरुण काँवर, डहर, पृष्ठ संख्या. 60
6. उपेन राभा हाकाचाम, असमिया आरु असमर भाषा-उपभाषा, पृष्ठ संख्या. 291